एच.एस. बराड़, के.एस. कुमारन और स्वतंत्र कुमार, जे.

काका-याचिकाकर्ता

बनाम

हसन बानो और अन्य,-प्रतिवादी

सी.आर.एल. 1992 का आर. नं. 45

21 अक्टूबर 1997

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125 से 128—मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986—धारा 5 और 6—1986 अधिनियम के प्रावधान पूर्वव्यापी नहीं हैं और न्यायालयों के निर्णयों और आदेशों को अमान्य नहीं कर सकते हैं। संहिता की धारा 125 के तहत पारित सक्षम क्षेत्राधिकार - अधिनियम निहित अधिकारों को नहीं छीनता है।

(मोहम्मद.यूनुस बनाम बीबी फोंकानी @तसरून निसा और एक अन्य, 1987 (2) अपराध 241, और, महबूब खान @बाबू बनाम परवीन बानो और एक अन्य (2) 1988 तलाक और वैवाहिक मामले 233)-असहमत थे।

अभिनिर्धारित किया गया कि मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 की खंडओं की व्याख्या करना मुश्किल होगा ताकि यह अभिनिर्धारित किया जा सके कि विधानमंडल का इरादा 1986 के अधिनियम द्वारा उसी लाभ को छीनने का है जो सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा आवेदक को दिया जाता है, जो स्वयं उसी वर्ग को ऐसी सुरक्षा प्रदान करने का इरादा रखता है। इस प्रकार, हम किसी अधिनियम के प्रावधानों को कानून के मूल उद्देश्य और उद्देश्य को नष्ट करने के लिए नहीं पढ़ सकते हैं। क़ानून की व्याख्या के कानून का यह अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि न्यायालय को कानून की नीति को आगे बढ़ाने और इस तरह के लाभ को कम करने के बजाय लाभ को बढ़ाने के लिए निर्माण को अपनाना चाहिए। 1986 के अधिनियम में ऐसा कुछ भी नहीं है जो न्यायालयों को अपनी न्यायिक अंतरात्मा को संतुष्ट करने के लिए प्रेरित कर सके कि जो पक्ष लंबे समय तक अदालतों में मामला लड़ता है, उसे वंचित किया जाना चाहिए।

निर्णय से ऐसे लाभ प्राप्त हो रहे हैं। एक ओर अधिनियम में ऐसे विशिष्ट प्रावधानों की अनुपस्थिति और दूसरी ओर अधिनियम की धारा 7 के प्रावधानों के संचालन से संहिता की धारा 128 का बहिष्कार विधायिका के प्रावधानों को पूर्वव्यापी प्रभाव न देने के इरादे का पर्याप्त संकेत है। यह अधिनियम उस सीमा तक. जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, अधिनियम की योजना हमारे मन में कोई संदेह नहीं छोड़ती है कि निर्धारित अधिकार जो न्यायालय के आदेश या निर्णय में परिणत हुए और अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले ही अंतिम हो गए, उन्हें अधिनियम के प्रावधानों द्वारा छीना नहीं गया है

निर्णय से उपार्जित होने वाले ऐसे लाभ।एक ओर अधिनियम में ऐसे विशिष्ट प्रावधानों की अभाव और अधिनियम की खंड 7 के प्रावधानों के संचालन से संहिता की खंड 128 का अपवर्जन इस बात का पर्याप्त संकेत है कि विधायिका का इरादा इस अधिनियम के प्रावधानों को उस हद तक पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं देना है।ऊपर चर्चा की गई अधिनियम की योजना हमारे दिमाग में कोई संदेह नहीं छोड़ती है कि निर्धारित अधिकार जो न्यायालय के आदेश या निर्णय में समाप्त हो गए थे और अधिनियम के प्रारंभ से पहले ही अंतिम हो गए थे, उन्हें 1986 के अधिनियम के प्रावधानों द्वारा नहीं लिया गया है।

(पैरा 34 &37)

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973- धारा 125 से 128-मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986- धारा 5 और 6- संहिता की धारा 125 के तहत दावा करने 1986 अधिनियम के प्रावधानों के लागू होने से नाबालिग मुस्लिम बच्चे के भरण-पोषण का अधिकार प्रभावित नहीं होता

यह अभिनिर्धारित किया गया कि मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 न तो अभिप्रेत था और न ही वास्तव में ऐसा कोई प्रावधान करता है जो एक मुस्लिम जोड़े से पैदा हुए बच्चों के भरण-पोषण को नियंत्रित करेगा।इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की खंड 125 के प्रावधान संहिता के प्रावधानों में दिए गए प्रावधानों के अनुसार बच्चों द्वारा अपने माता-पिता और अन्य रिश्तेदारों से भरण-पोषण के दावे के संबंध में लागू हैं।यहां तक कि अल्पसंख्यक बच्चे को भी संहिता के प्रावधानों के तहत भरण-पोषण प्रदान करने के लिए कोई विचार नहीं किया जाता है।संहिता की खंड 125 (संहिता की पुरानी खंड 488) में आने वाले 'बच्चा' शब्द का अर्थ नाबालिग बेटा या बेटी नहीं है।वास्तविक सीमा 'स्वयं को बनाए रखने में असमर्थ' अभिव्यक्ति में निहित है।इस अधिनियम की खंड 3 (1) (बी) के प्रावधान मुस्लिम तलाकशुदा पत्नी को तलाक लेने का अधिकार देते हैं।उन बच्चों के लिए ऐसे प्रावधान का दावा करें जहां उनके द्वारा बच्चों का रखरखाव किया जा रहा है और वह भी दो साल की सीमित अवधि के लिए।अतः भरण-पोषण का दावा करने का बच्चे का अधिकार मां के अधिकार से स्वतंत्र है और इस अधिनियम के प्रावधानों पर निर्भर नहीं है। इसलिए, यह कहने का कोई औचित्य नहीं होगा कि संहिता के प्रावधान केवल उन बच्चों पर लागू होते हैं जिन्होंने वयस्कता प्राप्त नहीं की है।मूल उद्देश्य एक ऐसे बच्चे को रखरखाव प्रदान करना है जो खुद को बनाए रखने में समर्थ नहीं होने की सामग्री को संतुष्ट करता है।परिणाम यह है कि यह किसी भी तरह से बच्चे के पक्ष में सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय द्वारा पहले से पारित आदेश को अप्रभावी नहीं बनाएगा।

(पैरा 38 और40)

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-128-मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986-धारा 3 और 4 -

अधिनियम की धारा 3 के तहत तलाकशुदा मुस्लिम पत्नी द्वारा भरण-पोषण का दावा 'इद्दत' की अवधि तक ही सीमित नहीं है-वह उसके बाद की अवधि के लिए जीवन भर या अपने पुनर्विवाह तक उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण की हकदार होगी।कोड के खंड 125 और अधिनियम के 3 और 4 के बीच कोई विसंगति नहीं है।

(अखिल भारतीय मुस्लिम अधिवक्ता मंच *बनाम* उस्मान खान ब्राह्मणी @बाशा और अन्य, 1990 (2)।अखिल भारतीय हिंदू विधि रिपोर्टर 41)-असहमत।

यह अभिनिर्धारित है कि किसी को भी 'इद्दत अवधि के भीतर' अभिव्यक्ति की व्याख्या करने के लिए कोई प्रशंसनीय आधार नहीं मिल सकता है, जिसके लिए रखरखाव प्रदान किया जाना एकमात्र अवधि है। यह अभिव्यक्ति, चाहे अधिनियम के अन्य प्रासंगिक प्रावधानों के साथ पढ़ी जाए या अधिनियम की मुख्य योजना के साथ, किसी अन्य तरीके से व्याख्या करने में सक्षम नहीं है, सिवाय इसके कि इसका मतलब यह है कि प्रावधान किया जाना है और भुगतान उप-

के तहत दर्शाया गया है। अधिनियम की धारा 5 की धारा (3) को इद्दत अवधि में लागू किया जाएगा। इस प्रकार, मजिस्ट्रेट को स्वयं को संतुष्ट करना होगा, यदि भुगतान इद्दत की निर्धारित अवधि के भीतर किया गया है, न कि इद्दत अवधि के लिए। 'भीतर' शब्द को 'के लिए' या 'का' के रूप में प्रतिस्थापित करने और पढ़ने का कोई कारण नहीं है। यह क़ानून की व्याख्या का एक स्थापित सिद्धांत है कि अदालतें आम तौर पर शब्दों को प्रतिस्थापित नहीं करेंगी और प्रावधानों को वैसे ही पढ़ेंगी जैसे वे अधिनियमित होते हैं। यह अवश्य माना जाना चाहिए कि विधानमंडल द्वारा उपयोग किया गया प्रत्येक शब्द सार्थक है और अधिनियम के प्रावधान में उचित रूप से उपयोग किया गया है। अभिव्यक्ति 'भीतर' सीमा की अवधि यानी इद्दत अवधि को अधिक इंगित करती है और विशेष रूप से जब इद्दत की अवधि अधिनियम में ही परिभाषित की गई है। यदि 'भीतर' शब्द को 'के लिए' शब्द से प्रतिस्थापित कर दिया जाता है, तो इसका इस कानून के पूरे स्वरूप को बदलने का असर होगा और संभवतः इस अधिनियम के उद्देश्य की निराशा होगी, जो सुरक्षा तलाकशुदा मुस्लिम महिला को प्रदान करना है।

(पैरा 51)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि रखरखाव की राशि और देय अन्य राशियों और उस प्रावधान के अनुरूप वितरित की जाने वाली संपत्तियों के अलावा खंड 3 के तहत मेहर को एक घटक के रूप में जोड़ने का विधानमंडल का इरादा उस अधिनियम के तहत तलाकशुदा महिलाओं को निश्चित और अतिरिक्त वित्तीय और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना है।

(पैरा 61)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि 'इद्दत अवधि के भीतर' अभिव्यक्ति केवल उस अवधि को परिभाषित और योग्य बनाती है जिसके भीतर पति द्वारा विभिन्न देनदारियों का निर्वहन किया जाना है और इसका मतलब यह नहीं है कि उसका दायित्व केवल उस अवधि तक सीमित है।क्या यह विधानमंडल का इरादा हो सकता है जहां वे पूर्ण सुरक्षा प्रदान करने का इरादा रखते हैं?

मेहर के भुगतान, रखरखाव, संपत्तियों के समर्पण और एक तरफ बच्चों के लिए उसके रखरखाव के लिए पर्चे, इस तथ्य के बावजूद कि उसे अपने विवाहित जीवन के दौरान मेहर मिली होगी, वे इस लाभ को सीमित अवधि के लिए देने का इरादा रखते थे और उसके बाद अपने पूरे जीवन के दौरान या जब तक वह फिर से शादी नहीं कर लेती, तब तक उसे अपने बच्चों का पालन-पोषण करने और अपने दोनों उद्देश्यों को पूरा करने के लिए छोड़ दिया जाता है।यह अधिनियम के उद्देश्य को पूरी तरह से विफल कर देगा और वास्तव में विधायी इरादे की एक विकृत धारणा होगी।

(पैरा 63)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि उपरोक्त चर्चा से जो एकमात्र निष्कर्ष निकाला जा सकता है वह यह है कि इद्दत अवधि के भीतर पति द्वारा पत्नी को किया जाने वाला उचित और निष्पक्ष प्रावधान और भरण-पोषण वह होना चाहिए जो उसे सुरक्षा और उसके जीवन के लिए ऐसा जीवन स्तर प्रदान करे जैसा कि अधिनियम की खंड 3 के तहत अभिनिर्धारित किया गया है, जिसमें विफल रहने पर ऐसे भरण-पोषण का भुगतान करना पति का निरंतर दायित्व होगा।रखरखाव की राशि के निर्धारण और भुगतान में निष्पक्षता अधिनियम की खंड 3 के प्रावधानों की नींव प्रतीत होती है। उचित भरण-पोषण तय करने में निष्पक्षता भी न्यायालयों के लिए मार्गदर्शक कारक है जो अधिनियम की खंड 3 में बताए गए अपेक्षित मापदंडों के अनुसार एक पत्नी के लिए एक निष्पक्ष और उचित जीवन सुनिश्चित करेगा जब तक कि वह जीवित है या वह पुनर्विवाह नहीं करती है।

(पैरा 65)

आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि हम इन दोनों कानूनों के बीच ऐसी कोई विसंगति

या विरोधाभास देखने में विफल रहते हैं दोनों को किसी दिए गए वर्ग के रखरखाव के अधिकार की रक्षा करने के लिए एक सामान्य इरादे से कानून बनाया गया है।जबकि अधिनियम उस प्रकार के दावों पर अधिक जोर देता है जिसके लिए एक तलाकशुदा मुस्लिम महिला भरण-पोषण के अधिकार को शामिल करने की हकदार है, संहिता के प्रावधान जो व्यक्तियों के एक बड़े वर्ग पर लागू होते हैं, लेकिन केवल भरण-पोषण का दावा करने का अधिकार देते हैं।वे एक सामान्य उद्देश्य को प्राप्त करने का इरादा रखते हैं अर्थात दी गई परिस्थितियों में पत्नी या तलाकशुदा पत्नी को देय न्यूनतम सम्मान और गरिमा और भरण-पोषण की राशि।ये वे प्रावधान हैं जो एक दूसरे के समानांतर चलते हैं।दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 और मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम के प्रावधान। 1986 विभिन्न क्षेत्रों में काम करता है और कुछ क्षेत्रों में एक सामान्य इच्छित उपचार के साथ काम करता है, जैसा कि अधिनियम के प्रावधानों की भाषा से स्पष्ट है। इसलिए, भरण-पोषण का भुगतान करने का पति का दायित्व केवल इद्दत की अवधि तक ही सीमित नहीं है, जब तक कि पति ने इद्दत अवधि के भीतर या उसके बाद उचित भरण-पोषण का भुगतान और प्रावधान नहीं किया है, जो अधिनियम के प्रावधानों में निर्दिष्ट अनिवार्य अवयवों को ध्यान में रखते हुए, उसके शेष जीवन के लिए या जब तक वह फिर से शादी नहीं करती है या कोई अयोग्यता या अपराध अर्जित नहीं करती है, तब तक रखरखाव की एक उचित राशि होगी।

उसे कानूनी रूप से इस तरह के उचित और निष्पक्ष प्रावधान और रखरखाव प्राप्त करने से वंचित करें।

(पैरा 72,73 और76)

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-127-मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986-धारा 5 और 7-1986 अधिनियम के प्रारंभ के बाद लंबित मामलों को अधिनियम की धारा 5 के प्रावधानों के अधीन शासित किया जाएगा-हालांकि, संहिता का सहारा लेना अनुमत होगा जहां दोनों पक्ष एस के प्रावधानों द्वारा शासित होने के लिए शपथ पत्र जमा करते हैं।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि संहिता की खंड 125 या 127 के तहत इस अधिनियम के प्रारंभ में लंबित प्रत्येक आवेदन का निपटान अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार किया जाएगा जिसका स्पष्ट रूप से अर्थ है 'खंड 5 के प्रावधानों के अधीन'।

(पैरा 77)

आगे यह अभिनिर्धारित किया कि

प्रश्न संख्या 1: दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 125 के तहत सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय द्वारा पारित अंतिम आदेश और संहिता की खंड 128 के प्रावधानों के अनुसार इसका निष्पादन न तो अमान्य है और न ही मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 के प्रावधानों द्वारा वर्जित है।अधिनियम के प्रावधानों ने संहिता की खंड 125 के तहत निर्धारित अधिकारों और लाभों के साथ निहित पार्टी को अलग नहीं किया

प्रश्न संख्या 2: संहिता की खंड 125 के तहत भरण-पोषण का दावा करने का बच्चे का अधिकार इस अधिनियम के प्रावधानों से किसी भी तरह से प्रतिकूल रूप से प्रभावित नहीं है। हालाँकि, यह प्रारंभिक अवधि के लिए सीमा के अधीन है।ऐसे बच्चे के जन्म की तारीख से दो साल, वह भी केवल तभी, जब पिता ने उस संबंध में मां के दावे पर ऐसे बच्चे को उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण प्रदान किया हो।

प्रश्न संख्या 3: तलाकशुदा मुस्लिम पत्नी द्वारा भरण-पोषण का दावा अनिवार्य रूप से केवल इद्दत अवधि तक ही सीमित नहीं होना चाहिए।जब तक पति सक्षम अधिकार क्षेत्र वाले न्यायालय के समक्ष यह नहीं दिखाता है कि उसने इद्दत

अवधि के भीतर पत्नी को उसके जीवन के लिए या जब तक वह पुनर्विवाह नहीं करती, उसके लिए एक उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण प्रदान किया है, जो एक पर्याप्त प्रावधान है।पति इससे पहले दिखा सकता है।अदालत ने कहा कि पत्नी अपने स्वयं के कार्य और आचरण से इस तरह की राशि प्राप्त करने के लिए अपात्र हो गई है, मैं कानून के साथ नृत्य करता हूं या है 3 उसे रखरखाव की राशि के भुगतान के लिए अयोग्य घोषित कर दिया।

प्रश्न संख्या 4: एक तलाकशुदा मुस्लिम महिला इस अधिनियम के प्रारंभ के बाद संहिता की धारा 125 से 128 के प्रावधानों का सहारा नहीं ले सकती है। तथापि, ऐसे प्रावधानों का सहारा लेना भी अनुज्ञेय है यदि दोनों पक्ष अधिनियम की धारा 5 को आगे बढ़ाते हुए ऐसे प्रावधान द्वारा शासित होने के लिए अपने आवश्यक शपथ पत्र प्रस्तुत करते हैं। यह उत्तर स्पष्ट रूप से हमारे द्वारा प्रश्न संख्या 1 को दिए गए उत्तर के अधीन है।

(पारस 80 से 83)

याचिकाकर्ता की ओर से ए. के. चोपड़ा, अधिवक्ता, गुरपाल सिंह, अधिवक्ता, एन. के. *गुप्ता, अधिवक्ता और संदीप जसुजा, अधिवक्ता*

अरुण नेहरा, अधिवक्ता और मनीष भारद्वाज, प्रतिवादी *के अधिवक्ता,*

निर्णय

स्वतंत्र कुमार, जे.

(1) भारत के लोगों ने भारत को एक संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक, गणराज्य बनाने के संकल्प के साथ खुद को एक संविधान दिया, जिसका उद्देश्य और उद्देश्य अपने नागरिकों को सभी क्षेत्रों में न्याय, विश्वास और अभिव्यक्ति में स्वतंत्रता और स्थिति की समानता प्रदान करना था। व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाले भाईचारे को बढ़ावा देने का अवसर। भारत के संविधान की प्रस्तावना स्पष्ट शब्दों में यही कहती है। किसी भी व्यक्ति की प्रतिष्ठा, चाहे वह किसी भी स्थिति, धर्म, वर्ग और समुदाय का हो, राज्य और उसकी संस्थाओं के लिए सर्वोपरि है। किसी व्यक्ति की बुनियादी ज़रूरत को सुनिश्चित करने के लिए राज्य की ओर से अयोग्य प्रयास एक संवैधानिक दायित्व है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में धर्मनिरपेक्षता सुनिश्चित समानता का एक विस्तारित सिद्धांत है। संविधान सर्वोच्च कानून है और यह अपने सभी रिश्तेदारों से ऊपर है। कानून, चाहे वे राज्य या केंद्र द्वारा अपने विधायी अधिकार क्षेत्र और प्रथागत या व्यक्तिगत कानूनों के दायरे में अधिनियमित किए गए हों, सभी को भूमि के सर्वोच्च कानून, भारत के संविधान को रास्ता देना चाहिए। अन्य सभी कानूनों को संवैधानिक कानून के अनुरूप होना चाहिए और सभी कानूनों को संविधान के तहत दिए गए सुरक्षा प्रावधानों और लगाई गई सीमाओं के अधीन होना चाहिए। हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में संविधान अन्य सभी कानूनों के लिए वास्तविक उपदेश है, भले ही उनकी उत्पत्ति और कानून बनाने का अधिकार कुछ भी हो। भारत के संविधान की बुनियादी संरचनाओं में से एक होने के नाते 'धर्मनिरपेक्षता' शब्द का हमारे देश की संपूर्ण सामाजिक और कानूनी व्यवस्था में एक संभावित विकृत अर्थ और अर्थ है।धर्मनिरपेक्षता यह विश्वास है कि राज्य, नैतिकता की शिक्षा, आदि धर्म से स्वतंत्र होनी चाहिए, जी. जे. होलीके की सामाजिक नैतिकता की प्रणाली (द चैंबर्स 20th सेंचुरी डिक्शनरी देखें)।

(2) दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 के अध्याय IX में धारा 125 से 128, जिसे इसके बाद संहिता के रूप में संदर्भित किया गया है, एक संहिता में एक स्व-निहित संहिता है।दूसरे शब्दों में, तलाकशुदा या न लेने वाली पत्नी के लिए अपने पति और अन्य संबंधों से भरण-पोषण का दावा करने के लिए एक पूर्ण स्व-निहित प्रक्रिया प्रदान की गई है, जहां पर्याप्त साधन रखने वाला व्यक्ति पत्नी या अपने वैध या अवैध बच्चों की उपेक्षा करता है या उन्हें बनाए रखने से इनकार करता है।इन प्रावधानों का उद्देश्य आवेदक को निर्वाह के तत्काल साधन प्रदान करना है, इससे पहले कि आवेदक न्यूनतम साधनों की कमी के कारण जीवन के कठिन तरीकों और वास्तविकताओं से मर जाए।ये प्रावधान सार्वभौमिक रूप से सभी आवेदकों पर लागू होते हैं, चाहे वे किसी भी समुदाय, जाति या पंथ से संबंधित हों।एक तलाकशुदा पत्नी भी दावा कर सकती है और भरण-पोषण प्राप्त करने की हकदार है, यदि वह संहिता में निहित इन प्रावधानों के बुनियादी तत्वों को पूरा करती है और उसका दावा कानून के तय किए गए सिद्धांतों के अनुरूप है।

(3) हमने एक धर्मनिरपेक्ष गणराज्य को चुना है।संविधान के तहत धर्मनिरपेक्षता का अर्थ है कि राज्य किसी विशेष धर्म के प्रति वफादार नहीं है और कोई राज्य धर्म नहीं है।संविधान सभी धर्मों को समान स्वतंत्रता देता है।प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म का पालन करने और प्रचार करने की स्वतंत्रता है।लेकिन व्यक्ति या संप्रदाय के धर्म का राज्य के सामाजिक-आर्थिक कानूनों के मामले में कोई लेना-देना नहीं है।संविधान के तहत धर्म की स्वतंत्रता नागरिकों के धर्मनिरपेक्ष अधिकारों और/या सामाजिक-आर्थिक संबंधों को विनियमित करने के लिए राज्य की शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालने की अनुमति नहीं देती है।

(4) व्यक्तिगत कानून सांविधिक अधिकार को दूर नहीं कर सकता है और जब स्थिति की मांग होती है तो इसे सांविधिक अधिकारों के पक्ष में झुकना चाहिए।विधायी अनुशासन और देश के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के स्वामित्व ने लगातार इस प्रस्ताव का निपटारा किया है कि सांविधिक कानून व्यक्तिगत कानूनों पर प्राथमिकता लेते हैं और सांविधिक कानून को संवैधानिक जनादेश के अधीन होना चाहिए।

(5) प्रथागत या वैधानिक कानून में किसी भी काम की मात्रा को संविधान के बुनियादी अभाव या संविधान में निहित सुरक्षा और प्रतिभूतियों में सेंध लगाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

(6) मोहम्मद के मामले में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय।अहमद खान *बनाम शाह बानो* बेगम *और अन्य (1) ने इस* सिद्धांत को स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया कि तलाकशुदा मुस्लिम महिला के लिए उपलब्ध वैधानिक कानून, जो तब तक पत्नी रहेगी जब तक कि वह संहिता की खंड 125 के उद्देश्यों के लिए शादी नहीं करती है और उसे बनाए रखने का अधिकार उस पर लागू व्यक्तिगत कानून के प्रावधानों से प्रतिकूल रूप से प्रभावित नहीं होगा।दूरगामी परिणामों के इस प्रासंगिक निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः—

(7) पाठ्यपुस्तकों में कथन अर्थात्। मुल्ला का मोहम्मडन कानून (18वां संस्करण); तैयबजी का मुस्लिम कानून (चौथा संस्करण) इस प्रस्ताव को स्थापित करने के लिए अपर्याप्त है कि मुस्लिम पति अपनी तलाकशुदा पत्नी, जो खुद का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, के भरण-पोषण के लिए बाध्य नहीं है। धारा 125 उन मामलों से संबंधित है, जिनमें पर्याप्त संपत्ति रखने वाला व्यक्ति दूसरों के बीच, अपनी पत्नी, जो खुद का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, की उपेक्षा करता है या भरण-पोषण करने से इंकार कर देता है। चूंकि मुस्लिम पर्सनल लॉ, जो इद्दत की अवधि तक तलाकशुदा पत्नी के भरण-पोषण के लिए पति के दायित्व को सीमित करता

है, धारा 125 द्वारा परिकल्पित स्थिति पर विचार या सामना नहीं करता है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि मुस्लिम पति, उसके अनुसार पर्सनल लॉ, अपनी तलाकशुदा पत्नी, जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, को इद्दत की अवधि से परे भरण-पोषण प्रदान करने के लिए बाध्य नहीं है। सही स्थिति यह है कि, यदि तलाकशुदा पत्नी अपना भरण-पोषण करने में सक्षम है, तो उसे भरण-पोषण प्रदान करने का पति का दायित्व इद्दत की अवधि की समाप्ति के साथ समाप्त हो जाता है। यदि वह अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, तो वह धारा 125 का सहारा लेने की हकदार है। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि मुस्लिम पति के दायित्व के प्रश्न पर धारा 125 के प्रावधानों और मुस्लिम पर्सनल लॉ के प्रावधानों के बीच विरोधाभास है। एक तलाकशुदा पत्नी के लिए भरण-पोषण प्रदान करें जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है।"

(8) शाह बानो (उपरोक्त) के मामले में उच्चतम न्यायालय के फैसले के परिणामस्वरूप मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 लागू किया गया, जिसे इसके बाद संदर्भित किया गया हैः

इस अधिनियम के रूप में 1986 का यह अधिनियम संख्या 25 9 मई 1986 को लागू हुआ और इसका शीर्षक दिया गया है, "ऐसी मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करने के लिए एक अधिनियम, जिन्हें उनके पतियों ने तलाक दे दिया है, या उनसे तलाक ले लिया है और प्रदान करने के लिए एक अधिनियम है।" उससे जुड़े या उसके आनुषंगिक मामलों के लिए"। इस अधिनियम के प्रावधानों के संचालन का सीमित क्षेत्र इस अधिनियम के उद्देश्य और योजना से ही स्पष्ट है। इसमें उन मुस्लिम महिलाओं की लड़ाई के लिए आवेदन है जो तलाकशुदा हैं या जिन्होंने अपने पतियों से तलाक ले लिया है। इस प्रकार, इसके संचालन का क्षेत्र महिलाओं के निर्दिष्ट वर्ग तक ही सीमित है और इसका अनुप्रयोग भी उसी वर्ग तक सीमित है। बहुत सीमित सीमा तक इसका उपयोग बच्चों पर होता है और वह भी उनके जन्म की तारीख से दो वर्ष की सीमित अवधि के लिए। शीघ्र ही, हम इस अधिनियम के प्रावधानों और योजना पर चर्चा करने के लिए आगे बढ़ेंगे

(9) यह कानून शाहबानो (सुप्रा) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तय किया गया था और इस देश के नागरिकों के बीच असमानता के तत्व के बिना लागू किया गया था। हालाँकि, अधिनियम के अधिनियमन ने इसके परिणामस्वरूप उत्पन्न हुए विभिन्न क्षेत्रों में विवाद के विरुद्ध स्थिति को बदल दिया। हम मुख्य रूप से समय-समय पर व्यक्त किए गए सामाजिक और राजनीतिक विचारों के मतभेदों से चिंतित नहीं हैं, लेकिन इस मामले में हमें जो चिंता है वह इस न्यायालय की न्यायिक घोषणाओं में मतभेद है, जो विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा व्यक्त किए गए विपरीत विचारों से समर्थित है। देश। विभिन्न न्यायालयों की इन घोषणाओं का लाभ उठाते हुए, हम संहिता की तुलना में अधिनियम के अनुप्रयोग और इसके विपरीत और इन वैधानिक प्रावधानों के तहत लगाई गई सीमाओं के दायरे के संबंध में कुछ सवालों के जवाब देने का प्रयास कर रहे हैं। न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के निरंतर मतभेद से प्रेरित होकर, इस न्यायालय की एक खण्ड पीठ यह उचित माना कि इस आपराधिक संशोधन में उत्पन्न होने वाले प्रश्नों का निर्णय एक पूर्ण पीठ द्वारा किया जाना चाहिए और इसलिए 12 नवंबर, 1992 के अपने आदेश के माध्यम से निर्देश दिया, जो निम्नानुसार हैः—

"उपस्थित

ए. के. चोपड़ा, अधिवक्ता

अरुण नेहरा, एडिशनल।ए. जी. हरियाणा।

इस पुनरीक्षण याचिका में उठाया गया मुख्य प्रश्न है क्या 28 फरवरी, 1985 को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की खंड 125 के तहत पत्नी के पक्ष में पारित भरण-पोषण का आदेश मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 के लागू होने के बाद जीवित रहता है।संशोधन यह था कि22 जनवरी, 1992 के आदेश द्वारा एक खण्ड पीठ में भर्ती किया गया।प्रत्यर्थी-पति की ओर से, अखिल भारतीय मुस्लिम अधिवक्ता मंच *बनाम उस्मान खान ब्राह्मणी और* अन्य *पर निर्भरता रखी गई* है।आंध्र प्रदेश हाई कोरट की पूर्ण पीठ।निम्नलिखित प्राधिकरणों में एक विपरीत दृष्टिकोण लिया गया है, जिसमें इस न्यायालय के तीन एकल पीठ के निर्णय शामिल हैं, जो न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, मालेरकोटला के विवादित आदेश में भी उल्लिखित हैं:—

(1) *श्रीमती. हज़रान* बनाम *अब्दुल रहमान*,

(2) *मेजर रउफ अहमद* बनाम *कंवर अंजुम जामली*,

(3) *फैजुद्दीन खान* बनाम *अतिरिक्त अधिकारी।सत्र न्यायाधीश*,

(4) *अरब अहमदिया अब्दुल्ला etc.v। अरब बाली मोहमुन्स सैय्यदई* आदि।,

(5) *अब्दुल खादर* बनाम *श्रीमती. रजिया बेगम*,

(6) *इदरीस अली और अन्य* बनाम *रमेशना खातून और अन्य*,

दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को कुछ समय तक सुनने के बाद, हम यह उचित समझते हैं कि मामले का निर्णय पूर्ण पीठ द्वारा किया जाना चाहिए।

वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, पति को एक सशर्त आदेश दिया गया था।पति उसी का पालन करने में विफल रहने के कारण, स्थगन आदेश को इस परिणाम के साथ खाली कर दिया गया था कि पत्नी और बच्चे के लिए कानून के अनुसार भरण-पोषण के आदेश को निष्पादित करने के लिए खुला है।

इसलिए हम निर्देश देते हैं कि मामले को पूर्ण पीठ को भेजने के लिए कागजात माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखे जाएं।

(एसडी/-)।

(ए पी चौधरी)
.न्यायाधीश।

(एसडी/-)।,

12 नवंबर, 1992

(हरफुल सिंह बरार)
न्यायाधीश।

(10) हम पहले उस मूल आधार को देना उचित मान सकते हैं जिसने डिवीजन बेंच द्वारा पारित संदर्भ के उपरोक्त आदेश को जन्म दिया। हुस्न बानो (प्रतिवादी नंबर 1) का विवाह काका (याचिकाकर्ता) से हुआ था। वे काफी समय तक एक साथ रहे और पार्टियों के विवाह से मोहम्मद। अमरान (प्रतिवादी नंबर 2 नाबालिग) का जन्म हुआ था। 10 मई, 1983 को या उसके आसपास हुस्न बानो और नाबालिग बच्चे ने संहिता की धारा 125 के तहत एक याचिका दायर की, जिसे 1983 के मामले संख्या 6 के रूप में दर्ज किया गया था। उन्होंने याचिकाकर्ता काका से भरण-पोषण का दावा किया। विद्वान मजिस्ट्रेट ने, दिनांक 28 फरवरी 1985 के आदेश द्वारा, यह कहते हुए याचिका स्वीकार कर ली कि हुस्न बानो रुपये की दर से भरण-पोषण पाने की हकदार थी। 200 प्रति माह और मोहम्मद अमरान माइनर को रु। संहिता की धारा 125 के तहत रखरखाव के रूप में 75 प्रति माह। पार्टियों के बीच भरण-पोषण का आदेश अंतिम हो गया है और काका ने भरण-पोषण का भुगतान करने के लिए आवेदन किया है जिसके परिणामस्वरूप काका के खिलाफ गिरफ्तारी वारंट जारी करने के लिए आवेदन दायर किया गया है। उन्हें सज़ा सुनाई गई. इसके बाद भी वह प्रतिवादियों को देय भरण-पोषण राशि का भुगतान करने में विफल रहा। विद्वान मजिस्ट्रेट, मलेरकोटला ने, दिनांक 2 जनवरी, 1987 के आदेश द्वारा गुजारा भत्ता की बकाया राशि का भुगतान न करने पर संहिता की धारा 125(3) के तहत काका की सजा बढ़ा दी। इस आदेश को काका ने 1987 के आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 193 में इस उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी थी। पुनरीक्षण का निपटारा विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा किया गया था, - आदेश, दिनांक 20 अगस्त, 1990 द्वारा। पति-काका को बकाया राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था 18 मई, 1986 की अवधि तक चार समान मासिक किश्तों में भरण-पोषण की राशि और न्यायालय ने विद्वान ट्रायल कोर्ट को याचिकाकर्ता-पति के कथनों पर फैसला देने का निर्देश दिया कि उसने 2 जनवरी, 1987 को अपने भाई की उपस्थिति में अपनी पत्नी को तलाक दे दिया था। पहली बार यह याचिका हाई कोर्ट के सामने लगाई गई। निर्णय लंबित रहने के दौरान आवेदक हुस्न बानो और उनके बेटे ने दो आवेदन दायर किए। 19 नवंबर, 1988 से 18 जनवरी, 1991 की अवधि के लिए भरण-पोषण के बकाया की वसूली के लिए 1991 का आवेदन संख्या 5 दायर किया गया था और 19 मई, 1986 से 18 नवंबर की अवधि के लिए देय भरण-पोषण के बकाया का दावा करने के लिए 1988 का आवेदन संख्या 42 लंबित था। 1988. इन दोनों आवेदनों का निपटारा यह कहकर कर दिया गया कि आवेदक पति से भरण-पोषण की बकाया रकम वसूलने की हकदार है, जैसा कि इन दोनों आवेदनों में दावा किया गया है। ट्रायल कोर्ट के फैसले के पैराग्राफ संख्या 6 और 7 में दर्ज इस मामले की खूबियों पर असर डालने वाले महत्वपूर्ण तथ्य पर इस स्तर पर ध्यान देने की जरूरत है, जो इस प्रकार है: -

"6.अब यह पहले निर्धारित किया जाना है कि हुसैन बानो आवेदक और काका प्रतिवादी के बीच तलाक हुआ है या नहीं।29 जुलाई, 1991 को काका प्रतिवादी ने इस अदालत में बयान दिया कि उसने 2 जनवरी, 1987 को हुसन बानो आवेदक संख्या 1 को तलाक दे दिया था।उसी तारीख को, हुसन बानो आवेदक

ने भी काका प्रतिवादी के बयान को *स्वीकार* करते हुए बयान दिया।29 जुलाई, 1991 के सम तिथि के आदेश के अनुसार, पक्षों के बयानों को ध्यान में रखते हुए, यह माना गया कि 2 जनवरी, 1987 को हुसन बानो आवेदक और काका प्रतिवादी के बीच तलाक हो गया है।इस प्रकार, स्वीकार्य है कि काका प्रतिवादी ने 2 जनवरी, 1987 को हुसन बानो आवेदक को तलाक दे दिया है।

(7) अब यह निर्धारित किया जाना है कि क्या 2 जनवरी, 1987 को तलाक के बाद, हुसन बानो आवेदक संख्या 1 और मोहम्मद।अमरान आवेदक संख्या 2, खंड 125 के तहत उन्हें दी गई रखरखाव राशि की वसूली के हकदार हैं।

(12) निचली अदालत द्वारा 21 दिसंबर, 1991 के आदेश के माध्यम *से* पत्नी और नाबालिग बच्चे को दी गई राहत, 1992 के आपराधिक संशोधन संख्या 45 में इस अदालत के समक्ष दायर की गई है, जो इस अदालत के विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष सुनवाई के लिए आई *थी,* जिन्होंने 22 जनवरी, 1992 के अपने आदेश के माध्यम से पुनरीक्षण याचिका को एक खण्ड पीठ के समक्ष सुनवाई के लिए स्वीकार कर लिया था।जब मामला पीठ के समक्ष आया तो उन्होंने मामले को पूर्ण पीठ के पास भेज दिया जैसा कि पहले कहा गया था।

(13) खण्ड पीठ द्वारा व्यक्त किए गए संबंधित विचारों की उचित रूप से सराहना आदेश के लिए हम निम्नलिखित प्रश्नों को तैयार करना उचित समझते हैं जो वर्तमान मामले में विषय को नियंत्रित आदेश वाले कानून के तथ्यों और स्थिति से स्पष्ट रूप से उत्पन्न होते हैं और फिर उनमें से प्रत्येक के साथ समान स्पष्टीकरण के साथ व्यवहार आदेश के लिए आगे बढ़ते हैं:—

(i) क्या मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 के प्रावधान पूर्वव्यापी रूप से इस हद तक काम करते हैं कि इसका दण्ड प्रक्रिया संहिता की खंड 125 के तहत पारित सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय के आदेश/फैसले को अमान्य करने का *प्रभाव पड़ता* है, अंतर-पक्षकारों को प्रदान करता है, अर्थात क्या ये प्रावधान पक्षकारों को निहित अधिकारों/लाभों से वंचित करते हैं?

(ii) क्या संहिता की खंड 125 के तहत एक नाबालिग बच्चे के भरण-पोषण का दावा करने का अधिकार है

अधिनियम के प्रावधानों के लागू होने से प्रभावित होने का तरीका?

(iii) क्या अधिनियम की धारा .3 के प्रावधानों के तहत एक तलाकशुदा मुस्लिम पत्नी द्वारा भरण-पोषण का दावा केवल 'इद्दत' की अवधि तक ही सीमित होना चाहिए या इसके बाद की अवधि के लिए भी उचित प्रावधान और भरण-पोषण होना चाहिए?

(iv) धाराओं के प्रावधानों का दायरा और प्रभाव क्या है?
125 1986 के अधिनियम के प्रारंभ के बाद संहिता के 128 तक, लंबित निपटान या अन्यथा मामलों के संबंध में?

प्रश्न सं। 1.

(14) संहिता की धारा 125 से 128 के प्रावधान एक सामान्य कानून का हिस्सा हैं जो देश में पत्नियों या यहां तक कि तलाकशुदा पत्नियों द्वारा उठाए गए भरण-पोषण के दावों पर समान रूप से लागू होता है।इन प्रावधानों को लागू करने से आवेदक की जाति, पंथ और धर्म की सीमा समाप्त हो जाती है।इन प्रावधानों के अनुप्रयोग को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों को

शाह बानो (उपरोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विस्तृत रूप से समझाया गया है।संसद ने मुस्लिम तलाकशुदा महिलाओं को अधिकारों की सुरक्षा प्रदान करने के प्रमुख उद्देश्य के साथ 1986 का अधिनियम अधिनियमित किया।इस प्रकार, 1986 के अधिनियम के प्रावधान एक सीमित वर्ग, मुस्लिम तलाकशुदा महिलाओं पर लागू होते हैं।

(15) 1986 के अधिनियम की खंड 3 की उप-खंड (1) के खंड (ए) से (डी) के तहत एक तलाकशुदा मुस्लिम महिला उसमें बताए गए लाभों की हकदार है।इद्दत अवधि के दौरान पत्नी को इस तरह का उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण प्रदान करना या करना पति का दायित्व है।ऐसे बच्चों के जन्म की संबंधित तिथियों से कम से कम दो साल की अवधि के लिए पत्नी के साथ रहने वाले बच्चों के लिए इसी तरह का प्रावधान करने के लिए पति पर एक वैधानिक दायित्व लगाया गया है, शादी के समय उसे दिए जाने वाले महर या दहेज की राशि के बराबर राशि और शादी के समय और शादी के बाद रिश्तेदारों और दोस्तों द्वारा उसे दी गई सभी संपत्तियों को उसे वापस करना पति का दायित्व है।पति द्वारा ऐसे दायित्वों के निर्वहन की चूक में, तलाकशुदा पत्नी को पूर्व में बताए गए सभी उद्देश्यों में से किसी के लिए आवेदन दायर करने का अधिकार दिया गया है, जिसका निपटारा विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा अधिनियम की खंड 3 की उप-खंड (2) के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए किया जाएगा। यदि विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा इस प्रकार पारित आदेश नहीं है

इसका पालन करते हुए, मजिस्ट्रेट के पास दंड प्रक्रिया संहिता के तहत जुर्माना लगाने के लिए प्रदान किए गए तरीके से देय रखरखाव, मेहर या दहेज की राशि वसूलने के लिए वारंट जारी करने की शक्ति है और यहां तक कि अधिनियम की खंड 3 की उप-खंड (4) के प्रावधानों के अनुसार चूक करने वाले व्यक्ति को सजा देने की भी शक्ति है।

(16) अधिनियम की खंड 4 में और सुरक्षा उपाय प्रदान किए गए हैं कि उस समय लागू किसी अन्य कानून के प्रावधानों और स्वयं अधिनियम के प्रावधानों के बावजूद, यदि पत्नी इद्दत अवधि के बाद अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, तो अधिनियम की खंड 4 की उप-खंड (1) में निर्दिष्ट संबंधों के खिलाफ इस तरह के भरण-पोषण के भुगतान का निर्देश देने वाला आदेश पारित किया जा सकता है, और यदि खंड 4 की उप-खंड (1) के प्रावधानों के तहत भरण-पोषण का भुगतान करने के लिए पर्याप्त साधनों के साथ ऐसा कोई संबंध मौजूद नहीं है, तो उस स्थिति में राज्य वक्फ बोर्ड को अधिनियम की खंड 4 की उप-खंड (2) के तहत ऐसे भरण-पोषण का भुगतान करने का दायित्व है।

(17) अधिनियम की खंड 5 पक्षकारों को संहिता की खंड 125 से 128 के प्रावधानों के तहत या अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार शासित होने का विकल्प देती है, इस तरह के विकल्प को सुनवाई की पहली तारीख को ही निर्धारित प्रपत्र में एक शपथ पत्र दाखिल करके संबंधित पक्षकार घोषित किया जाना चाहिए।

(18) अधिनियम की खंड 7 जिसे 'संक्रमणकालीन प्रावधान' कहा गया है, विशेष रूप से यह प्रावधान करता है कि अधिनियम के प्रारंभ पर मजिस्ट्रेट के समक्ष लंबित खंड 125 या संहिता की खंड 127 के तहत एक तलाकशुदा मुस्लिम महिला द्वारा आवेदन संहिता में कुछ भी निहित होने के बावजूद और अधिनियम की खंड 5 के प्रावधानों के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार निपटाया जाएगा।

(19) अधिनियम, जिसमें कुल मिलाकर केवल सात धाराएँ हैं, में उपरोक्त सामग्री प्रावधान हैं।उपरोक्त प्रावधानों और इस तथ्य से कि पार्टियों के पास भी अपने मामलों को संहिता के प्रावधानों के तहत या अधिनियम के प्रावधानों के तहत निपटाने का विकल्प है, अधिनियम की योजना को दर्शाता है जो निहित अधिकारों को वापस लेने का संकेत नहीं है।अधिनियम के

प्रावधानों की सरल भाषा से पता चलता है कि यह इसके अनुप्रयोग में संभावित है।हालाँकि, लंबित मामलों में इसके प्रक्रियात्मक अनुप्रयोग को बहुत सीमित सीमा तक पूर्वव्यापी होने का संकेत दिया गया है।विधायिका का यह इरादा उपरोक्त प्रावधानों में और विशेष रूप से अधिनियम की खंड 7 में स्पष्ट रूप से स्पष्ट किया गया है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि अधिनियम की खंड 5 के तहत विधानमंडल ने संहिता की खंड 125 से 128 के प्रावधानों का एक विशिष्ट संदर्भ दिया है, लेकिन अधिनियम की खंड 7 के प्रावधानों में स्पष्ट रूप से संदर्भ को हटा दिया गया है।

संहिता की खंड 128 के प्रावधानों के लिए जो उस प्रावधान में इसकी अभाव के कारण विशिष्ट है।यदि विधानमंडल संहिता की खंड 128 के प्रावधानों पर खंड की सीमाओं को नियंत्रित करने और रखने का इरादा रखता है, तो उसे इन प्रावधानों में ऐसा स्पष्ट करना चाहिए था।

(20) यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि सक्षम अधिकार क्षेत्र वाले न्यायालयों के आदेशों/निर्णयों द्वारा निर्धारित किए गए और सुनिश्चित aakebabहो गए पक्षों के अधिकार मौजूदा अधिकारों के विपरीत निहित अधिकार हैं।किसी पक्ष के निहित अधिकारों को लागू करके नहीं खोया जा सकता है।विधानमंडल को एक स्पष्ट भाषा में अधिनियम पर ही इस तरह के परिणाम को स्पष्ट करना होगा।यहां तक कि विधानमंडल भी कानून बनाकर किसी निर्णय को अप्रभावी या निरर्थक नहीं बना सकता है।शाह बानो (उपरोक्त) के मामले में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय की घोषणा ने उपरोक्त विधान को पारित करने का अवसर दिया होगा, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय आज भी न्यायालय के निर्णय के रूप में खड़ा है।भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के साथ पठित अनुच्छेद 141 के तहत, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित कानून भारतीय क्षेत्र के भीतर सभी न्यायालयों को बाध्य करने के लिए है और यह देश का कानून है।

(21) सक्षम अधिकार क्षेत्र न्यायालय द्वारा पारित वर्तमान मामले में निर्णय पक्षों के बीच अंतिम हो गया है।अधिनियम के प्रावधानों में ऐसा कुछ भी नहीं है जो आवश्यक निहितार्थ के सिद्धांत पर आधारित हो कि यह उस अधिकार को छीनने का इरादा रखता है जो सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय द्वारा प्रासंगिक समय पर लागू कानून के अनुसार दिया गया था।संहिता की खंड 125 से 128 के प्रावधान अपने आप में एक संहिता हैं।खंड 128, जो मुख्य रूप से रखरखाव के आदेशों के प्रवर्तन से संबंधित एक खंड है, के प्रावधानों को अधिनियम की खंड 7 के दायरे से बाहर करना, कानून की ओर से निहित अधिकारों को प्रभावित नहीं करने के विपरीत इरादे को दर्शाता है, जो सक्षम अधिकार क्षेत्र वाले न्यायालय के अंतिम आदेशों या फरमानों से समाप्त हुए हैं।

9. शुरुआत में ही हम एस. आर. भागवत और अन्य बनाम मैसूर राज्य जेटी 1995 (6) एस. सी. 444

(22) के मामले में उच्चतम न्यायालय के हाल के *फैसले का उल्लेख करना* चाहेंगे, *जिसमें विस्तृत चर्चा के* बाद न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा था कि इस तरह की विधायी शक्ति का प्रयोग करके एक बाध्यकारी न्यायिक घोषणा को अप्रभावी नहीं बनाया जा सकता है।माननीय न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून निम्नलिखित तरीके से प्रतिपादित किया गया हैः—

> "अब इस न्यायालय के कई निर्णयों से यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि पक्षों के बीच एक बाध्यकारी न्यायिक घोषणा को किसी *भी विधायी शक्ति की* सहायता से एक ऐसे प्रावधान को लागू करके अप्रभावी नहीं बनाया जा सकता है जो

सारतः ऐसे निर्णय को अधिक नियंत्रित करता है और एक विधायी अधिनियम के दायरे में नहीं है जो निर्णय के आधार या आधार को विस्थापित करता *है और पूर्वव्यापी प्रभाव वाले ऐसे अधिनियम* द्वारा कवर किए जाने वाले पूरे विषय से संबंधित व्यक्तियों के एक वर्ग पर समान रूप से लागू होता है।

खंड 11 की उप-खंड (2) पर केवल एक नज़र डालने से पता चलता है कि प्रतिवादी, कर्नाटक राज्य, जो इसके खिलाफ उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ के फैसले का एक पक्ष था, ने अपनी विधायी शक्ति का सहारा लेकर निर्णय के बाध्यकारी प्रभाव से बाहर निकलने की कोशिश की थी।किसी भी न्यायालय या सक्षम प्राधिकारी के निर्णय, फरमान और आदेश जो राज्य के खिलाफ अंतिम हो गए थे, उन्हें खंड 11 की उप-खंड (2) के विवादित प्रावधानों को लागू करके समाप्त करने की मांग की गई थी।इस तरह के प्रयास को अनुमेय विधायी अभ्यास नहीं कहा जा सकता है।इसलिए, खंड 11 को राज्य विधानमंडल की ओर से राज्य के खिलाफ सक्षम न्यायालयों के बाध्यकारी निर्णयों को विधायी रूप से अति-शासित करने का प्रयास माना जाना चाहिए।

xx xx xx

वर्तमान मामले में प्रतिवादी-राज्य ने विवादित अधिनियम की खंड 11 की उप-खंड (2) को अधिनियमित करके स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय के बाध्यकारी *निर्णय को रद्द करने या कम करने की मांग की है और संबंधित प्रतिमानों और संविधान के तहत काम करने वाले विभिन्न प्राधिकरणों को सौंपी गई न्यायिक शक्ति का अतिक्रमण किया है।विधायी शक्ति के इस तरह के प्रयोग को स्वीकार नहीं किया जा सकता है।*

(हमारे द्वारा प्रदान किया गया जोर)

(23) अंदर इस निर्णय के आलोक में अब हम ऐसे कानूनों की पूर्वव्यापीता के दायरे पर चर्चा करते हैं।प्रत्येक *अधिनियम प्रथमदृष्टया* संचालन में संभावित है जब तक कि यह स्पष्ट रूप से या पुनर्निर्धारित संचालन के लिए आवश्यक निहितार्थ द्वारा नहीं किया जाता है।यह केवल प्रक्रियात्मक कानून हैं जिन्हें आम तौर पर पूर्वव्यापी माना जाता है, जबकि निहित अधिकारों से संबंधित कानून संभावित है।अधिनियम की व्याख्या का मुख्य स्वीकृत सिद्धांत यह है कि इसकी व्याख्या संभावित रूप से की जानी चाहिए जब तक कि अधिनियम की भाषा इसे पूर्वव्यापी न बना दे।इससे पहले कि किसी अधिनियम को आवश्यक निहितार्थ के सिद्धांत पर पुनर्निर्धारित प्रभाव दिया जा सके, कुछ अच्छे कारण और उपस्थिति परिस्थितियाँ होनी चाहिए जो इस तरह के तर्क को उचित ठहराएँ

अधिनियम के प्रावधानों की व्याख्या। कानून का इस तरह से अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि संशोधन अधिनियम के लागू होने के समय पूरे हुए लेन-देन के संबंध में नई अक्षमताएं या दायित्व या नए कर्तव्य पैदा हों।

(24) संघ संसद या राज्य विधानमंडल के पास उनके लिए प्रतिबद्ध कानून के क्षेत्र में कानून बनाने की पूर्ण शक्तियां हैं, और कुछ संवैधानिक प्रतिबंधों के अधीन वे संभावित रूप से और साथ ही पूर्वव्यापी रूप से कानून बना सकते हैं।जहां विधानमंडल पूर्वव्यापी रूप से कानून को लागू करने का इरादा रखता है, वहां विधानमंडल की ओर से उस संबंध में विशेष रूप से अधिनियम बनाना या ऐसी भाषा का उपयोग करना अनिवार्य है जो अधिनियम की योजना में न्यायालयों के लिए ऐसा निष्कर्ष निकालना अनिवार्य बना दे।यह आवश्यकता अधिक प्रमुख है जहां इरादा सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालयों के निर्णयों से उत्सर्जित स्थापित और निहित अधिकारों के तहत लाभ प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को अलग करना है।इस अधिनियम या इस तरह के किसी भी कानून के किसी भी प्रावधान को संदर्भित या हमारे ध्यान में नहीं लाया गया

है, जो हमें यह मानने के लिए राजी कर सकता है कि यह अधिनियम अपने संचालन में पूर्वव्यापी है और वह भी निहित अधिकारों को विभाजित करने की सीमा तक।

(25) इस स्तर पर लॉर्ड ब्लेन्सबर्ग एंड लोप्स, एल. जे. की टिप्पणियों का संदर्भ देना उचित हो सकता है जैसा कि न्यायाधीश जी. पी. सिंह ने अपनी पुस्तक 'प्रिंसिपल्स ऑफ स्टैच्युटरी इंटरप्रिटेशन' के छठे संस्करण (1996) में दर्ज किया है, जो इस प्रकार हैः—

> "लॉर्ड ब्लेन्सबर्ग के शब्दों में, "जो प्रावधान क़ानून के पारित होने पर अस्तित्व में किसी अधिकार को छूते हैं, उन्हें स्पष्ट अधिनियमन या आवश्यक इरादे की अनुपस्थिति में में पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किया जाना चाहिए।" "प्रत्येक अधिनियम, यह कहा गया है, "एल. ओ. पी. ई. एस., एल. जे. का अवलोकन किया गया है", जो मौजूदा अधिनियमों के तहत अर्जित निहित अधिकारों को छीन लेता है या बाधित करता है, या एक नया दायित्व पैदा करता है या एक नया कर्तव्य लगाता है, या पहले से ही पिछले लेनदेन के संबंध में एक नई अक्षमता को जोड़ता है, यह माना जाना चाहिए कि इसका उद्देश्य पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं है।" सामान्य नियम के एक तार्किक परिणाम के रूप में, उस पूर्वव्यापी संचालन को तब तक अभिप्रेत नहीं माना जाता है जब तक कि वह इरादा नहीं है
>
> व्यक्त शब्दों या आवश्यक निहितार्थ द्वारा प्रकट होने पर, इस प्रभाव के लिए एक अधीनस्थ नियम है कि एक अधिनियम या उसमें एक खंड का अर्थ इस तरह से नहीं लगाया जाना चाहिए कि इसकी भाषा से अधिक व्यापक पूर्वव्यापी संचालन हो।"

(26) वर्तमान मामले में अधिनियम को पूर्वव्यापी या संभावित कहने का सवाल सरल नहीं है।लेकिन पति-याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि अधिनियम के प्रारंभ होने पर स्वाभाविक परिणाम यह है कि पत्नी को निर्धारित अधिकारों से वंचित कर दिया जाता है।पर्याप्त/निहित अधिकारों को उन अधिकारों के रूप में समझा जाना चाहिए जो संबंधित समय पर लागू कानूनों के अनुसार सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालयों द्वारा निर्धारित और अंतिम रूप से तय किए जाते हैं।इन अधिकारों को प्रक्रियात्मक कानून के संदर्भ में किसी पक्ष के पक्ष में उत्पन्न होने वाले अधिकारों के साथ नहीं मिलाया जा सकता है।प्रक्रियात्मक अधिनियमों के संबंध में संशोधित क़ानून का प्रभाव पूरी तरह से उन क़ानूनों की तुलना में एक अलग आधार पर आधारित है जो पक्षों के निहित या मूल अधिकारों को प्रभावित करते हैं।

(27) *जोस दा कोस्टा और एक अन्य बनाम बास्कोरा सदाशिव* सिनाई *नारकोर्निन और अन्य के मामले* में, निर्वाहक अधिकारों पर पूर्वव्यापी प्रभाव पर टिप्पणी करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः—

> "जबकि केवल प्रक्रिया के मामलों से निपटने वाले क़ानून के प्रावधान ठीक से हो सकते हैं, जब तक कि वह निर्माण पाठ्य रूप से अस्वीकार्य न हो, उनके लिए पूर्वव्यापी प्रभाव का श्रेय दिया जाता है, ऐसे प्रावधान जो क़ानून के पारित होने पर अस्तित्व में किसी अधिकार को छूते हैं, व्यक्त अधिनियम या आवश्यक इरादे की अनुपस्थिति में में पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किए जाते हैं।अपील का अधिकार एक मूल अधिकार होने के कारण, एक वाद की संस्था अपने साथ यह निहितार्थ रखती है कि उस समय लागू कानून के तहत उपलब्ध सभी क्रमिक अपीलों को मुकदमे के मुकदमाकारों के लिए मुकदमे के शेष कार्यकाल के दौरान संरक्षित किया जाएगा।"

(28) के. एस. परिपूर्णन बनाम *केरल राज्य* और *अन्य (12) के मामले में,* न्यायालय

ने उपरोक्त सिद्धांत को दोहराते हुए कहाः—

> "मूल अधिकारों से संबंधित एक अधिनियम एक अधिनियम से अलग है जो प्रक्रिया या साक्ष्य से संबंधित है
>
> यद्यपि मूल अधिकारों से संबंधित कोई अधिनियम प्रथमदृष्टया संभावित है जब तक कि *वह स्पष्ट* रूप से या पूर्वव्यापी प्रभाव के लिए आवश्यक निहितार्थ द्वारा नहीं किया जाता है, मुख्य रूप से प्रक्रिया या साक्ष्य के मामलों से संबंधित या जो प्रकृति में घोषणात्मक है, उसे पूर्वव्यापी के रूप में समझा जाना चाहिए जब तक कि कोई स्पष्ट संकेत न हो कि ऐसा विधायिका का इरादा नहीं था।"

इसी तरह का विचार सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनंत गोपाल शेओरेव बनाम द *स्टेट ऑफ बॉम्बे के मामले में व्यक्त* किया था।

(29) टी. आर. कपूर और *अन्य बनाम राज्य* के *मामले* में; *हा और अन्य* एक निर्णय जिस पर पत्नी की ओर से पेश विद्वान अधिवक्ता ने भरोसा किया था, न्यायालय ने यह टिप्पणी करते हुए कि विधानमंडल द्वारा कानून का संशोधन भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 की तरह संविधान के मूल सिद्धांतों को प्रभावित नहीं करना चाहिए, निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः—

> "यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि संविधान के अनुच्छेद 309 के परंतुक के तहत सेवा की शर्तों को विनियमित करने के लिए नियम बनाने की शक्ति अपने साथ पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ नियमों में संशोधन या परिवर्तन करने की शक्ति *रखती* हैःबी. एस. वढेरा बनाम भारत संघ, (1968) 3 एस. सी. आर. 575:(ए. *आई. आर.* 1969 *एस. सी. 118),* राज कुमार बनाम भारत संघ, (1975) 3 एस. सी. आर. 963:(ए. *आई.* आर 1975 एस. सी. 1116), के. नागराज बनाम ए. पी. राज्य (1985) 1 एस. सी. सी. 523:(ए. आई. *आर.* 1985 एस. सी. 551) और जम्मू-कश्मीर राज्य बनाम त्रिलोकी नाथ खोसला (1974) 1 एस. सी. आर. 771:(ए. आई. आर 1974 एस. सी. 1)।
>
> xx xx xx

हालाँकि यह नियम एक अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त सिद्धांत के अधीन है कि मौजूदा नियमों के तहत प्राप्त लाभों को पूर्वव्यापी प्रभाव से संशोधन द्वारा नहीं लिया जा सकता है, अर्थात, अनुच्छेद 309 के परंतुक के तहत ऐसा नियम बनाने की कोई शक्ति नहीं है जो निहित अधिकारों को प्रभावित करता है या बाधित करता है।इसलिए, जब तक यह नियमों में विशेष रूप से प्रदान नहीं किया जाता है, नियमों के संशोधन से पहले ही पदोन्नत किए गए कर्मचारियों को वापस नहीं किया जा सकता है और उनकी पदोन्नति को वापस नहीं लिया जा सकता है।दूसरे शब्दों में, पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ पदोन्नति के लिए योग्यता निर्धारित करने वाले ऐसे नियमों को अनिवार्य रूप *से* कला की परीक्षा को संतुष्ट करना चाहिए।14 और संविधान के 16 (1):मैसूर राज्य बनाम एम. एन. कृष्ण मूर्ति, (1973) एससीआर 575:)ए. आई. आर. 1973 एस. सी. 1146), बी. *एस.* यादव बनाम पंजाब राज्य, (1981) 1 एस. सी. आर. 1024:(ए. आई. आर. 1981 एस. सी. *561),* गुजरात राज्य बनाम रमनलाल केशवलाल सोनी, (1983) 2 एस. सी. आर. 287:(ए. आई. आर. 1984 *एस.* सी. 161) और के. सी. अरोड़ा बनाम हरियाणा राज्य, (1984) 3 एस. सी. आर. 623:(1984 प्रयोगशाला। आईसी 1015) "(हमारे द्वारा दिया गया जोर)

(30) एल 'ऑफिस चेरिफियन डेस *फॉस्फेट और एक अन्य बनाम यामाशिता शिनिनन* स्टीमशिप *कंपनी लिमिटेड के मामले में। हाउस ऑफ* लॉर्ड्स का बौचरा इस प्रकार थाः—

> "कानून बनाते समय संसद को यह माना गया था कि अतीत की घटनाओं और लेन-देन पर लागू कानून को इस तरह से बदलने का इरादा नहीं था जो उनमें संबंधित लोगों के लिए अनुचित था जब तक कि कोई विपरीत इरादा प्रकट न हो।तदनुसार, यह प्रश्न कि क्या कोई अधिनियम पूर्वव्यापी था, इस आधार पर निर्धारित किया जाना था कि क्या किसी विशेष मामले में पूर्वव्यापीता के सुझाए गए स्तर के साथ क़ानून को पढ़ने के परिणाम, इसमें शामिल पूर्वव्यापीता की डिग्री, अधिकारों के मूल्य, उपयोग की गई भाषा की स्पष्टता और जिन परिस्थितियों में कानून बनाया गया था, को ध्यान में रखते हुए, इतने अनुचित थे कि संसद द्वारा उपयोग किए गए शब्दों का अर्थ यह नहीं हो सकता था कि वे कहते प्रतीत हों।"

(31) सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने बाद के फैसलों में भी अनुमोदन के साथ वनों को नष्ट करने के दृष्टिकोण को दोहराया गया है।भारत *संघ और अन्य बनाम तुषार* रंजन *मोहंती और अन्य के मामले* में।एस , न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः—

> "संशोधित नियम 13 के पूर्वव्यापी संचालन को कायम नहीं रखा जा सकता है।नियम 13 का पूर्वव्यापी संशोधन प्रतिवादी 1 और प्रतिवादी 2 से 9 तक के अन्य सामान्य श्रेणी के उम्मीदवारों के निहित अधिकार को छीन लेता है।इसलिए, नियम 13, जिस हद तक इसे पूर्वव्यापी रूप से लागू किया गया है, अनुचित, मनमाना है और इस तरह, भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन है।नियम के पूर्वव्यापी संचालन को निरस्त करना होगा।"

उदय प्रताप सिंह और अन्य बनाम बिहार राज्य *और अन्य, के मामले* में *भी इसी तरह का विचार व्यक्त* किया गया था।

(32) किसी अधिनियम के प्रतिबंधित और सीमित दायरे के पूर्वव्यापी रूप से प्रभावी होने के संबंध में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय का सुसंगत दृष्टिकोण हमारे दिमाग में कोई संदेह नहीं छोड़ता है कि मूल घटक जो अधिनियम को डिक्री या निहित अधिकारों को प्रभावित करने की सीमा तक पूर्वव्यापी रूप से संचालित करेगा, निश्चित रूप से वर्तमान मामले में संतुष्ट नहीं है।

(33) पति याचिकाकर्ता की ओर से पेश विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रस्तुत करते हुए कि सक्षम न्यायालय द्वारा पारित आदेश इस अधिनियम के प्रावधानों के प्रारंभ पर अमान्य या अप्रभावी हो जाएगा, मोहम्मद के मामले में पटना उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसलों पर भरोसा किया।यूनुस बनाम *बीबी फेनकानी* उपनाम *तसरून निसा और एक अन्य, और* महबूब खान उपनाम बाबू बनाम परवीन बानो और एक अन्य *मामले में बॉम्बे* उच्च *न्यायालय के विद्वान एकल* न्यायाधीश, सबसे पहले, इन मामलों के तथ्य अलग और अलग थे, लेकिन कानून के सिद्धांत पर भी, हम इन निर्णयों में व्यक्त किए गए विचारों से सहमत नहीं हो पा रहे समर्थ।हालाँकि, पत्नी-प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने अब्दुल खादर बनाम रजिया बेगम के मामले में कर्नाटक उच्च न्यायालय के एक फैसले, इदरीस *अली आदि* के *मामले में* गुवाहाटी उच्च न्यायालय की एक पीठ पीठ के फैसले पर भरोसा किया है।v. रामेशा *खातून आदि, और फैज़ुद्दीन खान* बनाम *अतिरिक्त न्यायाधीश के मामले में* इलाहाबाद उच्च

न्यायालय का निर्णय।सत्र न्यायाधीश, एटाथ और अन्य ।इन सभी *निर्णयों में,* उसमें *बताए गए कारणों के लिए, जो हमारे* द्वारा दिए गए तर्क के अनुरूप हैं, यह अभिनिर्धारित किया गया कि 1986 के अधिनियम का प्रारंभ संहिता की खंड 125 के तहत पारित आदेशों को अमान्य या अप्रभावी नहीं बनाता है, जो अंतिम हो गए हैं।

(34) इस बिंदु पर मेजर रउफ अहमद बनाम कंवर अंजुम जमाली और श्रीमती के मामले में इस न्यायालय के दो निर्णयों *का संदर्भ देना* उचित *हो सकता है।* हज़रान बनाम *अब्दुल रहमान*।इन *मामलों में* यह विशेष रूप से अभिनिर्धारित किया गया था कि संहिता की खंड 128 के प्रावधान अधिनियम के प्रावधानों के प्रारंभ होने के बाद भी लागू होंगे। श्रीमती के मामले में। हज़रान (ऊपर) न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः—

> "उपरोक्त चर्चाओं का परिणाम यह है कि प्रावधान
>
> संहिता की खंड 128 के तहत रखरखाव के आदेश को लागू करने के संबंध में मुस्लिम महिला अधिनियम के लागू होने से प्रभावित नहीं हुआ है और संहिता की खंड 128 के तहत मजिस्ट्रेट के समक्ष किए गए आवेदनों को संहिता के प्रावधानों के अनुसार निपटाया जाना है।

जिस निष्कर्ष पर मैं पहुंचा हूं, उसके समर्थन में मैं मोहम्मद का उल्लेख *कर सकता* हूं।हाजी *बनाम* रुकिया, 1987 पी. *ए. पी. 472 केरल और अरब अहमदिया* अब्दुल्ला *और आदि बनाम अरब बाली मोहमुना* सैयदभाई और अन्य, ए. आई. आर. 1988 गुजरात, 141 (पृष्ठ 158 पर पैरा 36) जहां एक समान दृष्टिकोण लिया गया था।"

अरब अहमदिया अब्दुल्ला और *आदि के मामले में, बनाम* अरब *बाली मोहमुना सैयदभाई और अन्य आदि। (25),* इस अधिनियम के प्रावधानों की पूर्वव्यापीता का न्यायालय द्वारा निम्नलिखित शब्दों में उत्तर दिया गयाः—

> "मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 के अधिनियमन द्वारा, मजिस्ट्रेट द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत आदेश पारित किए गए। पी. सी. मुस्लिम पति को अपनी तलाकशुदा पत्नी को भरण-पोषण का भुगतान करने का आदेश देना ईमानदार नहीं होगा।अधिनियम में ऐसी कोई खंड नहीं है जो दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 125 के तहत मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेशों को अमान्य करती हो। पी. सी. इसके अलावा, एक बार सी. आर. की खंड 125 के तहत आदेश। तलाकशुदा महिला को भरण-पोषण प्रदान करने वाले पी. सी. को पारित कर दिया जाता है, फिर उसके अधिकारों को स्पष्ट कर दिया जाता है और उसे अपने पूर्व पति से भरण-पोषण की वसूली करने का निहित अधिकार मिलता है।संसद अधिनियम में कोई प्रावधान करके उस निहित अधिकार को नहीं छीनती है। एस. 5 के तहत।एस. एस. के प्रावधानों द्वारा शासित होने के लिए पक्षों को एक विकल्प दिया जाता है। करोड़ का 125 से 128। पी. सी. यह खंड यह भी इंगित करता है कि संसद का कभी भी मुस्लिम तलाकशुदा महिला के निहित अधिकार को छीनने का इरादा नहीं था, जिसे अधिनियम के पारित होने से पहले स्पष्ट कर दिया गया था। अधिनियम के प्रावधानों और एस. एस. के प्रावधानों के बीच कोई विसंगति नहीं है। करोड़ का 125 से 128। पी. सी. इसके विपरीत मुस्लिम महिला अधिनियम के प्रावधान तलाकशुदा महिला को उसके पूर्व पति की वित्तीय स्थिति के आधार पर अधिक राहत देते हैं।"

अधिनियम के प्रावधानों की ओर लौटते हुए, किसी भी प्रावधान से यह नहीं माना जाता है कि विधानमंडल का निहित अधिकारों को दूर करने का भी इरादा था।न्यायालय को इस धारणा पर आगे बढ़ना चाहिए कि विधानमंडल ने कोई गलती नहीं की है और स्पष्ट रूप से कहा है कि वह क्या कहना चाहता था।इस अधिनियम का उद्देश्य व्यक्तियों के एक वर्ग यानी तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के लिए सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करना है।इस अधिनियम की खंडओं की व्याख्या यह अभिनिर्धारित करने के लिए करना कठिन होगा कि विधायिका का इरादा वही लाभ छीनने का है जो किसी आवेदक को 1986 के अधिनियम द्वारा सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय द्वारा दिया जाता है, जो स्वयं उसी खंड को ऐसा संरक्षण प्रदान करने का इरादा रखता है।इस प्रकार, हम कानून के उद्देश्य और उद्देश्य को नष्ट करने के लिए किसी अधिनियम के प्रावधानों को नहीं पढ़ सकते हैं, यह क़ानूनों की व्याख्या के लिए कानून का एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि न्यायालय को इस तरह के लाभ को कम करने के बजाय कानून की नीति को आगे बढ़ाने और *अपने लाभ का विस्तार करने के लिए निर्माण को अपनाना* चाहिए (संदर्भ भारत संघ और एक अन्य बनाम प्रदीप कुमारी और अन्य ।

(35) हम इस प्रश्न की दूसरे दृष्टिकोण से जांच कर सकते हैं।देश के कानून और विशेष रूप से संवैधानिक संरक्षणों के अनुरूप कानूनों को प्रभावी बनाने के लिए कानूनों के प्रावधानों की व्याख्या की जानी चाहिए।किसी व्यक्ति के जीवन और गरिमा के लिए बुनियादी सुरक्षा और संविधान के प्रावधानों में महिलाओं के कल्याण के लिए विशेष रूप से गारंटी के साथ, हमें आवश्यक निहितार्थ के सिद्धांत पर भी व्याख्या करने की अनुमति नहीं देता है, इस अधिनियम के प्रावधानों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इस अधिनियम के प्रारंभ पर सक्षम अधिकार क्षेत्र वाले न्यायालय द्वारा पारित आदेश बहुआयामी है।

(36) हमने जो राय बनाई है, उसे बनाने के और भी कारण हैं।इस अधिनियम के विधायी प्रावधानों में विशिष्ट अभिव्यक्ति का अभाव है, जो पारित की अनुपस्थिति मेंो को अप्रभावी या अमान्य बनाने के लिए न्यायालय को राजी कर सकता है।वर्तमान अधिनियम में विधानमंडल ने निश्चित और असंदिग्ध भाषा का सहारा लिया है।अधिनियम की धारा 3 और 4 में एक गैर-अस्थाई खंड है।दूसरे शब्दों में विधानमंडल ने स्पष्ट रूप से अधिनियम के भीतर ही अपवाद प्रदान करने का अपना इरादा व्यक्त किया है।इस प्रकार, यह अनुमान की अनुपस्थिति में लगाया जा सकता है कि 'न्यायालयों के निर्णय, आदेश या फरमानों के बावजूद' अभिव्यक्ति का अभाव विधायिका की ओर से एक आकस्मिक पर्ची है।हमें इस भाषा की आपूर्ति करना या इस अधिनियम के किसी भी प्रावधान में इसे पढ़ना पूरी तरह से मुश्किल लगता है। इसके अलावा, प्रयोज्यता का बहिष्कार

संहिता की खंड 128 के इन प्रावधानों में से, जैसा कि अधिनियम की खंड 7 में इंगित किया गया है, पर्याप्त रूप से इसके विपरीत विधानमंडल के इरादे को इंगित करता है।ये इस अधिनियम के लिए कोई परिस्थितियां सहायक नहीं हैं और न ही अधिनियम की कोई भाषा या योजना हमारे लिए इस अधिनियम के प्रारंभ पर न्यायालय के आदेशों को अमान्य करने के लिए विधानमंडल की ओर से किसी भी इरादे को पढ़ना अनिवार्य बनाती है। आपत्तियों की प्रकृति, उनके सही परिप्रेक्ष्य और संदर्भ में पढ़े गए अधिनियम के प्रावधानों का दायरा और प्रभाव न्यायिक घोषणाओं के चरित्र को प्रभावित नहीं करता है।'व्याख्या न्यायशास्त्र' के स्थापित सिद्धांत वर्तमान मामले में इसके विपरीत किसी भी व्याख्या को स्वीकार नहीं करते हैं।न्यायिक घोषणाओं को अंतिम मानने और निहित अधिकारों में परिणत होने का एक अन्य स्वीकृत सिद्धांत भी किसी भी विपरीत दृष्टिकोण से उल्लंघन किया जाएगा।यह ध्यान दें योग्य है कि इस अधिनियम में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो इस अधिनियम के प्रारंभ के बाद न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को

निष्पादित करने का प्रावधान करता हो। अधिनियम में ऐसा कोई विशिष्ट प्रावधान भी नहीं है जिसका न्यायालय के निर्णयों को प्रत्यक्ष रूप से या आवश्यक निहितार्थ से अप्रभावी बनाने का प्रभाव हो।

(37) इस प्रकार इस अधिनियम में ऐसा कुछ भी नहीं है जो न्यायालयों को यह अभिनिर्धारित करने के लिए अपनी न्यायिक अंतरात्मा को संतुष्ट करने के लिए राजी कर सके कि एक पक्ष जो वित्तीय बाधाओं की कठोरता के तहत अदालतों में लंबी अवधि तक मामले (मामलों) लड़ता है और अंततः सफल होता है, उसका उद्देश्य निर्णय से प्राप्त होने वाले ऐसे लाभों से वंचित होना है।एक ओर अधिनियम में ऐसे विशिष्ट प्रावधानों की अभाव और अधिनियम की खंड 7 के प्रावधानों के संचालन से संहिता की खंड 128 का अपवर्जन इस बात का पर्याप्त संकेत है कि विधायिका का इरादा इस अधिनियम के प्रावधानों को उस हद तक पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं देना है।ऊपर चर्चा की गई अधिनियम की योजना हमारे दिमाग में कोई संदेह नहीं छोड़ती है कि निर्धारित अधिकार जो न्यायालय के आदेश या निर्णय में समाप्त हो गए थे और अधिनियम के संशोधन से पहले ही अंतिम हो गए थे, उन्हें 1986 के अधिनियम के प्रावधानों द्वारा छीन नहीं लिया गया है।

प्रश्न संख्या 2:

(38) अधिनियम के शीर्षक से ही पता चलता है कि इसका बच्चों के रखरखाव के दावे या अधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।खंड 3 (1) (बी) में बच्चों के रखरखाव का प्रावधान है यदि वे पत्नी के साथ रह रहे हैं, वह भी बच्चों के जन्म की तारीख से दो साल की सीमित अवधि के लिए।इस अधिनियम का न तो इरादा था और न ही यह वास्तव में ऐसा कोई प्रावधान करता है जो एक मुस्लिम जोड़े से पैदा हुए बच्चों के रखरखाव को नियंत्रित करेगा।

इसलिए, संहिता के प्रावधानों में दिए गए प्रावधानों के अनुसार, बच्चों द्वारा अपने माता-पिता और अन्य संबंधों से भरण-पोषण के दावे के संबंध में संहिता लागू है।यहां तक कि अल्पसंख्यक बच्चे को भी संहिता के प्रावधानों के तहत भरण-पोषण प्रदान करने के लिए कोई विचार नहीं किया जाता है, संहिता की खंड 125 (संहिता की पुरानी खंड 488) में आने वाले 'बच्चे' शब्द का अर्थ नाबालिग बेटा या बेटी नहीं है।वास्तविक सीमा 'स्वयं को बनाए रखने में असमर्थ' अभिव्यक्ति में निहित है।इस अधिनियम की खंड 3 (1) (बी) के प्रावधान मुस्लिम तलाकशुदा पत्नी को उन बच्चों के लिए इस तरह के प्रावधान का दावा करने का अधिकार देते हैं जहां उसके द्वारा बच्चों का पालन-पोषण किया जा रहा है और वह भी दो साल की सीमित अवधि के लिए।अतः भरण-पोषण का दावा करने का बच्चे का अधिकार मां के अधिकार से स्वतंत्र है और इस अधिनियम के प्रावधानों पर निर्भर नहीं है। इसलिए, यह कहने का कोई औचित्य नहीं होगा कि संहिता के प्रावधान केवल उन बच्चों पर लागू होते हैं जिन्होंने वयस्कता प्राप्त नहीं की है।मूल उद्देश्य एक ऐसे बच्चे को भरण-पोषण प्रदान करना है जो खुद को बनाए रखने में समर्थ नहीं होने के तत्वों को संतुष्ट करता है *(नानक चंद* बनाम *चंद्र किशोर अग्रवाल और अन्य*।

-(39) सैयद मुश्ताक अहमद बनाम *तसनीम कौसर* के *मामले में,* बॉम्बे उच्च न्यायालय ने कहा कि अधिनियम के प्रावधानों के तहत भरण-पोषण का दावा करने का अधिकार तलाकशुदा पत्नी में निहित है, न कि उस बच्चे में जिसके लिए भरण-पोषण की राशि का दावा किया जाता है।

(40) फिर यह अंतर इस तर्क को आगे बढ़ाने के लिए बहुत पारदर्शी और भ्रमित करने वाला प्रतीत होता है कि यदि बच्चा दो वर्ष की आयु प्राप्त कर लेता है (अधिनियम के प्रावधानों को लागू करते हुए) तो यह किसी भी तरह से बच्चे के भरण-पोषण का दावा करने के अधिकार को प्रभावित करेगा। संहिता की धारा 125 के अंतर्गत। इसका परिणाम यह होगा कि यह किसी

भी तरह से बच्चे के पक्ष में सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अप्रभावी नहीं बनाएगा। हम तर्क से पूरी तरह सहमत हैं और महसूस करते हैं कि यदि पिता को यह तर्क देने की अनुमति दी जाती है कि अधिनियम की धारा 3 (एल) (बी) के प्रावधानों के अनुपालन पर वह संहिता की धारा 125 के तहत दायित्व से मुक्त है, तो यह होगा यह न केवल विधायिका के इरादे को, बल्कि पिता के बुनियादी नैतिक, कानूनी और सामाजिक दायित्वों के पीछे की भावना को भी नष्ट करने जैसा है। हमारा मानना है कि इस तरह की व्याख्या किसी भी आधार पर उपयुक्त नहीं होगी और वास्तव में यह मानवीय मूल्यों के साथ खिलवाड़ होगी।

(41) इस प्रश्न पर आगे कोई चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है और हमें अब और हिरासत में रखने की *आवश्यकता* नहीं है क्योंकि यह प्रश्न अब एकीकृत नहीं है और वहां से उत्पन्न होने वाले सभी विवादों को आखिरकार भारत के *माननीय सर्वोच्च न्यायालय* द्वारा *नूर सबा* खातून बनाम मोहम्मद कासिम के मामले में सुलझा लिया गया है। , जिसमें यह निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया गया थाः—

इस प्रकार, व्यक्तिगत कानून और वैधानिक कानून (धारा 125 सीआर.पी.सी.) दोनों के तहत, पर्याप्त साधन रखने वाले एक मुस्लिम पिता का दायित्व है कि वह अपने नाबालिग बच्चों, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं, का तब तक भरण-पोषण करें, जब तक कि वे वयस्क न हो जाएं और मामले में महिलाओं की शादी होने तक उनकी संख्या की पुष्टि की जाती है, इस तथ्य के बावजूद कि नाबालिग बच्चे तलाकशुदा पत्नी के साथ रह रहे हैं। इस प्रकार राय के पहले भाग में पूछे गए प्रश्न का हमारा उत्तर यह है कि मुस्लिम माता-पिता के बच्चे धारा 125 सीआर के तहत भरण-पोषण का दावा करने के हकदार हैं। पी.सी. उनके वयस्क होने तक या अपना भरण-पोषण करने में सक्षम होने तक की अवधि, जो भी पहले हो, और महिलाओं के मामले में, जब तक उनकी शादी नहीं हो जाती है और यह अधिकार तलाकशुदा पत्नी के नवजात बच्चे के भरण-पोषण के लिए भरण-पोषण का दावा करने के अधिकार से प्रतिबंधित, प्रभावित या नियंत्रित नहीं है। अधिनियम 1986 की धारा 3(1)(बी) के तहत संबंधित बच्चे के जन्म की तारीख से दो साल की अवधि के लिए उसकी हिरासत में बच्चे। दूसरे शब्दों में, 1986 अधिनियम की धारा 3(1)(बी) किसी भी तरह से तलाकशुदा मुस्लिम माता-पिता के नाबालिग बच्चों के अपने पिता से धारा 125 सीआर के तहत भरण-पोषण का दावा करने के अधिकार को प्रभावित नहीं करती है। पी.सी. जब तक वे वयस्क न हो जाएं या अपना भरण-पोषण करने में सक्षम न हो जाएं, या महिलाओं के मामले में, जब तक उनकी शादी न हो जाए।"

(42) कानून की उपरोक्त तय स्थिति को ध्यान में रखते हुए हमारा विचार है कि अधिनियम का प्रारंभ किसी भी तरह से और किसी भी मामले में संहिता की खंड 125 के तहत भरण-पोषण का दावा करने वाले बच्चों के अधिकारों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित नहीं करता है।वास्तव में इस अधिनियम का बच्चे के जन्म की तारीख से दो साल पूरे होने के बाद उसके ऐसे अधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।यह अधिनियम केवल तलाकशुदा मुस्लिम महिला पर लागू होता है और संहिता की खंड 125 के तहत भरण-पोषण का दावा करने के पत्नी के अधिकार को भी किसी भी तरह से प्रभावित नहीं करता है, क्योंकि संहिता के प्रावधानों में 'पत्नी' अभिव्यक्ति में पत्नी के साथ-साथ तलाकशुदा पत्नी भी शामिल है।हालाँकि, तलाकशुदा पत्नी के अधिकार के संबंध में हम अपनी अनुवर्ती चर्चा में इस प्रश्न का उत्तर देंगे।

प्रश्न सं। 3:

(43) इस अधिनियम के प्रावधान तलाकशुदा पत्नी को भरण-पोषण प्रदान करने और इस कानून के तहत उसके अधिकारों की रक्षा करने के लिए विधानमंडल के दिमाग की व्याख्या करते हैं।कानून हमेशा एक उद्देश्य के साथ लागू किया जाता है।इस तरह के उद्देश्य को अपनी सीमा तक बढ़ाया जाना चाहिए, लेकिन दूसरों के हितों का उल्लंघन करने या खतरे में डालने के लिए, जो कानून द्वारा समर्थित है।अधिनियम के प्रावधान एक ऐसी योजना का संकेत देते हैं जिसका उद्देश्य मुस्लिम पत्नी के तलाक से उत्पन्न होने वाली सभी सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के लिए रामबाण के रूप में है।लेकिन यह भी उतना ही सच है कि एक विधानमंडल एक जादूई कानून नहीं बना सकता है जो व्याख्या के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ेगा या सभी स्थितियों के लिए एकदम सही होगा।प्रत्येक सामाजिक या लाभकारी कानून को आम हित और सभी के लाभ के मूल उद्देश्य के साथ अधिनियमित किया जाता है।

(44) इस अधिनियम के तहत पत्नी का भरण-पोषण करना पति का प्राथमिक कर्तव्य है।कई लेखकों द्वारा यह कहा गया है कि भरण-पोषण पति पर अवश्यकरणीय है क्योंकि यह कुरान और परंपराओं दोनों में एक नियम है।पत्नी का अधिकार आत्यन्तिक है और पति उसे बनाए रखने के लिए बाध्य है, भले ही उसके पास खुद को बनाए रखने के लिए अच्छे साधन हों और भले ही शादी संपन्न न हुई हो।व्यक्तिगत कानून के तहत पत्नी को बनाए रखने का दायित्व साझा नहीं किया जाना है (वर्मा के मुस्लिम विवाह, रखरखाव और विघटन, दूसरा संस्करण देखें)।

(45) मुस्लिम कानून के तहत विवाह कुछ निश्चित दायित्वों को जन्म देता है।इस अधिनियम के प्रावधानों में ऐसे कुछ दायित्वों का उल्लेख मिलता है। कानून की वर्तमान स्थिति में, कानूनी और नैतिक दायित्वों के बीच एक स्पष्ट अंतर है।कानूनी दायित्व कानून में लागू किए जा सकते हैं।श्री आसफ ए. ए. फिज़ी ने अपनी पुस्तक "आउटलाइन ऑफ मुहम्मडन लॉ, फोर्थ एडिशन" में विवाह की अवधारणा, विवाह से उत्पन्न होने वाले भरण-पोषण के पहलू के प्रति अधिक चिंता के साथ इसके दायित्वों को इस प्रकार समझाया हैः—

> "कानूनी रूप से माना जाता है कि इस्लाम में विवाह (निकाह) एक अनुबंध है न कि एक संस्कार।हालाँकि, इस कथन पर कभी-कभी इतना जोर दिया जाता है कि विवाह की वास्तविक प्रकृति अस्पष्ट हो जाती है और इस बात की अनदेखी की जाती है कि इसके अन्य महत्वपूर्ण पहलू भी हैं।उचित कानून पर आने से पहले, हम इस्लामी कानून में विवाह के तीन पहलुओं पर विचार करेंगे, जो समग्र रूप से विवाह की संस्था को समझने के लिए आवश्यक हैं, अर्थात्, (i) कानूनी, (ii) सामाजिक, (iii) धार्मिक।"

> "ये अधिकारी इस बात में कोई संदेह नहीं छोड़ते हैं कि कानूनी रूप से विवाह क्या है, और यह इस प्रकार है कि, जिस क्षण कानूनी अनुबंध स्थापित हो जाता है, उसके परिणाम स्वाभाविक रूप से और अनिवार्य रूप से होते हैं जैसा कि मुस्लिम कानून द्वारा प्रदान किया गया है।"

> "रखरखाव को नफाका कहा जाता है, और यह भोजन, परिधान और आवास को समझता है, हालांकि आम बोलचाल में, यह पहले तक ही सीमित है।तीन कारण

हैं जिनके लिए एक व्यक्ति पर दूसरे को बनाए रखना अनिवार्य है-विवाह, संबंध और संपत्ति।

विवाह पर सर्वोच्च दायित्व उत्पन्न होते हैं, पत्नी और बच्चों का पालन-पोषण एक प्राथमिक दायित्व है।"

उपरोक्त टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए और देश के कानून के आदेश द्वारा विनियमित सामाजिक व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए हमें इस अधिनियम के प्रावधानों की जांच करनी होगी।

पूर्ण पीठ को संदर्भित इस पुनरीक्षण याचिका में अधिनियम की धारा 3 वास्तव में विवाद का विषय है। धारा 3 की उपधारा (1) वस्तुतः प्रासंगिक प्रावधान है जिसे उल्लिखित निर्णयों के बीच बुनियादी विवाद को स्थापित करने के प्रयोजनों के लिए हमारे द्वारा समझा जाना आवश्यक है। अधिनियम की धारा 3 की उपधारा इस प्रकार है: "

उस समय लागू किसी अन्य कानूनी खेल में कुछ भी निहित होने के बावजूद, एक तलाकशुदा महिला का अधिकार होगा -

(a) उसके पूर्व पति द्वारा इद्दत अवधि के भीतर उसे उचित और निष्पक्ष प्रावधान और भरण-पोषण किया जाना और भुगतान किया जाना;

(b) जहाँ वह स्वयं अपने तलाक से पहले या बाद में पैदा हुए बच्चों का रखरखाव करती है, ऐसे बच्चों के जन्म की संबंधित तिथियों से दो साल की अवधि के लिए उसके पूर्व पति द्वारा एक उचित और निष्पक्ष प्रावधान और भरण-पोषण किया जाना चाहिए और भुगतान किया जाना चाहिए;

(c) उसकी शादी के समय या उसके बाद किसी भी समय मुस्लिम कानून के अनुसार उसे भुगतान करने के लिए सहमत महर या दहेज की राशि के बराबर राशि; और

(d) विवाह से पहले या उसके बाद या उसके रिश्तेदारों या दोस्तों या पति या पति के किसी रिश्तेदार या उसके दोस्तों द्वारा उसे दी गई सभी संपत्तियाँ।"

(46) खंड 3 की उप-खंड (2) में कहा गया है कि उचित और निष्पक्ष प्रावधान और रखरखाव या मेहर की देय राशि, यदि भुगतान नहीं किया गया है और उप-खंड (1) के खंड (डी) में निर्दिष्ट संपत्तियां तलाकशुदा महिला को नहीं दी गई हैं, तो उसे किसी भी या सभी पूर्व-वर्णित दावों के संबंध में दावा करने के लिए स्वयं मजिस्ट्रेट या अपने विधिवत अधिकृत एजेंट द्वारा से आवेदन करने का अधिकार है।खंड 3 की उप-खंड (3) संबंधित मजिस्ट्रेट से ऐसी संपत्तियों के भुगतान या समर्पण का निर्देश देने वाले आवेदन की तारीख से एक महीने के भीतर एक आदेश पारित करने की अपेक्षा करती है, इस शर्त के अधीन कि पति के पास पर्याप्त साधन हैं और वह पत्नी को 'इद्दत अवधि के भीतर' खंड 3 की उप-खंड (1) के तहत उसके और उसके बच्चों के लिए उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण की राशि का भुगतान करने में विफल रहा है या उपेक्षा की है।यदि मजिस्ट्रेट द्वारा इस प्रकार पारित आदेश का पालन नहीं किया जाता है, तो मजिस्ट्रेट को खंड 3 की उप-खंड (4) के तहत दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के तहत धन लगाने के लिए प्रदान किए गए तरीके से रखरखाव या मेहर या दहेज की राशि वसूलने के लिए वारंट

जारी करने की शक्तियां दी गई हैं और मजिस्ट्रेट के पास इस खंड में दर्शाई गई अवधि के अनुसार चूककर्ता को कैद करने की भी शक्ति है।

(47) इस अधिनियम की खंड 4, जिसमें एक गैर-अस्थाई खंड है, इन प्रावधानों के तहत बताई गई स्थितियों में तलाकशुदा पत्नी को रिश्तेदारों और वक्फ बोर्ड से भी भरण-पोषण के आदेश का प्रावधान करती है।खंड 4 के प्रावधान इस अधिनियम के प्रावधानों या उस समय लागू किसी अन्य कानून में निहित कुछ भी नहीं होते हैं।

(48) जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है कि ये इस अधिनियम के दो प्रभावी प्रावधान हैं। वास्तव में ये दोनों प्रावधान विधानमंडलों के इरादे और मुस्लिम तलाकशुदा पत्नियों को दिए जाने वाले संरक्षण के बारे में प्रकाश डालते हैं।

(49) खंड 3 की उप-खंड (1) को चार प्रकार के दावों में विभाजित किया जा सकता है जिसका तलाकशुदा मुस्लिम पत्नी हकदार होगीः—

(i) उसके पूर्व पति द्वारा इद्दत अवधि के भीतर एक उचित और निष्पक्ष *प्रावधान और रखरखाव किया* जाना और भुगतान किया जाना;

(ii) उपरोक्त दावे में ऐसे बच्चों के जन्म की संबंधित तिथियों से दो साल की अवधि के लिए सीमित मुस्लिम पत्नी से पैदा हुए बच्चों के लाभ के लिए समान दावा शामिल हो सकता है।

(iii) मुस्लिम कानून के अनुसार शादी के समय या उसके बाद किसी भी *समय पत्नी को मेहर या* दवार *की राशि का* भुगतान करने पर सहमति हुई; और

(iv) शादी से पहले और बाद में उसे उसके रिश्तेदारों या दोस्तों या पति के किसी रिश्तेदार या दोस्त द्वारा दी गई सभी संपत्तियां।

(50) ये 3 दावे प्रत्येक के विकल्प में नहीं हैंजोथेरा किसी भी तरह से परस्पर निर्भर नहीं हैं।पत्नी के लिए उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण मेहर या दहेज के भुगतान पर निर्भर नहीं है।एक ऐसा दावा है जो विवाह के लिए विचार के रूप में पक्षों के बीच स्वेच्छा से सहमत होता है जो स्पष्ट रूप से तलाक के लिए विचार नहीं हो सकता है।पत्नी द्वारा बच्चों के लिए दावा भी मेहर पर या इस दावे पर निर्भर नहीं है कि वह अपने लिए अन्य संबंध में करती है।पत्नी के लिए उचित और निष्पक्ष प्रावधान और भरण-पोषण को इसके संकीर्ण अर्थों में नहीं समझा या व्याख्या नहीं की जा सकती है।तलाकशुदा मुस्लिम महिला को सुरक्षा और संरक्षण प्रदान करने वाले अधिनियम के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अधिनियम की खंड 3 (1) के प्रावधानों को पढ़ा और समझा जाना चाहिए।

"इद्दत अवधि के भीतर" अभिव्यक्ति की व्याख्या करने के लिए कोई भी प्रशंसनीय आधार नहीं पा सकता है कि यह एकमात्र अवधि है जिसके लिए रखरखाव प्रदान किया जाना है।यह अभिव्यक्ति, चाहे अधिनियम के अन्य प्रासंगिक प्रावधानों के संयोजन में पढ़ी जाए या अधिनियम की मुख्य योजना के साथ पढ़ी जाए, किसी अन्य तरीके से व्याख्या करने में सक्षम नहीं है, सिवाय इसके कि इसका अर्थ और कहना है कि प्रावधान किया जाना है और अधिनियम की खंड 3 की उप-खंड (1) के तहत संकेतित भुगतान इद्दत अवधि के भीतर किए जाने हैं या

निविदा दी जानी है।

इस संबंध में उसी अभिव्यक्ति का भी उल्लेख किया जा सकता है जिसका उपयोग विधानमंडल द्वारा खंड 3 की उप-खंड (3) के खंड (ए) में किया गया है, जहां मजिस्ट्रेट को खुद को संतुष्ट करना होता है कि पति के पास पर्याप्त साधन हैं और वह इद्दत अवधि के भीतर पत्नी को उसके और बच्चों के लिए एक उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण करने या भुगतान करने में विफल रहा है या उपेक्षा की है।

इस प्रकार, मजिस्ट्रेट को खुद को संतुष्ट करना पड़ता है, यदि भुगतान इद्दत की निर्धारित अवधि के भीतर किया गया है, *न* कि इद्दत अवधि के लिए।

हमारे लिए 'भीतर' शब्द को 'के लिए' या 'के' के रूप में बदलने और पढ़ने का कोई कारण नहीं है।यह क़ानून की व्याख्या का एक स्थापित सिद्धांत है कि न्यायालय आम तौर पर शब्दों को प्रतिस्थापित नहीं करेंगे और प्रावधानों को पढ़ेंगे जैसे ही वे अधिनियमित किए जाते हैं। यह माना जाए कि विधानमंडल द्वारा उपयोग किया गया प्रत्येक शब्द सार्थक है और अधिनियम के प्रावधान में उचित रूप से उपयोग किया गया है।'भीतर' अभिव्यक्ति अधिक सीमा की अवधि यानी इद्दत अवधि को इंगित करती है और विशेष रूप से जब इद्दत की अवधि को अधिनियम में ही परिभाषित किया गया है।यदि 'भीतर' शब्द को 'के लिए' शब्द से प्रतिस्थापित किया जाता है, तो इसका इस कानून के पूरे रंग को बदलने का प्रभाव पड़ेगा और संभवतः इस अधिनियम के उद्देश्य की हताशा में परिणाम होगा, जो तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं को सुरक्षा और सुरक्षा प्रदान करना है।

(51) ये तीनों दावे एक-दूसरे के विकल्प में नहीं हैं, किसी भी तरह से अन्योन्याश्रित नहीं हैं। पत्नी के लिए उचित और निष्पक्ष प्रावधान और भरण-पोषण मेहर या मेहर के भुगतान पर निर्भर नहीं है। एक ऐसा दावा है जिस पर विवाह के प्रतिफल के रूप में पक्षों के बीच स्वेच्छा से सहमति व्यक्त की गई है जो स्पष्ट रूप से तलाक के लिए प्रतिफल नहीं हो सकता है। पत्नी द्वारा बच्चों के लिए दावा भी मेहर पर या उस दावे पर निर्भर नहीं है जो वह अपने लिए अन्य संबंध में करती है। पत्नी के लिए उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण का संकीर्ण अर्थ में अर्थ या व्याख्या नहीं की जा सकती। अधिनियम की धारा 3(1) के प्रावधानों को अधिनियम के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए पढ़ा और समझा जाना चाहिए जो कि तलाकशुदा मुस्लिम महिला को सुरक्षा और संरक्षण प्रदान करना है।

(52) एक अन्य सहायक लेकिन प्रासंगिक प्रश्न जो अब विचार के लिए उठता है, वह यह है कि क्या तलाकशुदा मुस्लिम महिला की पात्रता अधिनियम की खंड 3 (1) (ए) के तहत अकेले इद्दत की अवधि तक सीमित है और बाद की अवधि के लिए कोई भी दावा अधिनियम के प्रावधानों के तहत अनुज्ञेय नहीं है। यह सच है कि व्यक्तिगत कानून के अनुसार एक तलाकशुदा मुस्लिम महिला आम तौर पर इद्दत की अवधि के दौरान भरण-पोषण का दावा करने की हकदार है और यदि तलाक की सूचना की तारीख से उस अवधि की समाप्ति के बाद तक उसे तलाक की सूचना नहीं दी जाती है।लेकिन भविष्य के रखरखाव के लिए कोई भी समझौता न तो इस कानून के लिए अज्ञात है और न ही इसकी शुरुआत में अमान्य है।जैसा कि दुर्व्यवहार की स्थिति में उपयुक्त रखरखाव प्रदान करने के लिए समझौता सार्वजनिक नीति के खिलाफ होने के कारण अमान्य नहीं है।

(53) इस विषय पर केस लॉ पर चर्चा करने और कुछ मामलों का संदर्भ देने के बाद मुल्ला की पुस्तक में निम्नलिखित चित्र दिए गए हैं।

मुहम्मद कानून के सिद्धांत, पृष्ठ 274 पर सत्रहवां संस्करणः—

(a) एक मुसलमान और उसकी पहली पत्नी के बीच, दूसरी पत्नी के साथ उसकी शादी के बाद किया गया एक समझौता, जिसमें उसके लिए एक निश्चित भरण-पोषण का प्रावधान किया गया है, यदि वह भविष्य में दूसरी पत्नी के साथ नहीं रह सकती है, सार्वजनिक नीति के *आधार* पर अमान्य नहीं है (मंसूर बनाम अज़ीज़ुल (1928) 3 लखनऊ 603,109 आई. सी. 812)।

(b) यदि विवाह तलाक द्वारा विघटित हो जाता है, तो पत्नी खंड 279 में उल्लिखित अवधि के लिए भरण-पोषण की हकदार है और जीवन के लिए नहीं, जब तक कि समझौते में यह प्रावधान *नहीं है* कि *यह* जीवन के *लिए है* (मुहम्मद *मुईन-ईद-दीन बनाम* जमाल , और माईदीन बीवी बनाम माईदीन रोथर ।

(54) इस अधिनियम द्वारा शासित चिन्हित वर्ग को सुरक्षा प्रदान करने के विधायी इरादे को अधिनियम की योजना में खंड 4 को लागू करके विधानमंडल द्वारा इंगित सुनहरे अस्तर से एकत्र किया जा सकता है। खंड 3 में निहित प्रावधानों की स्थिति में भरण-पोषण का भुगतान करके तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं की रक्षा करने का इरादा महिलाओं को भरण-पोषण देने के लिए उपयोगी साबित नहीं होता है, जब विधानमंडल अधिनियम की खंड 4 (1) के तहत प्रावधान करता है कि वह अपने रिश्तेदारों से भरण-पोषण की हकदार है जो मुस्लिम कानून के तहत अपनी संपत्ति के उत्तराधिकारी होने के हकदार हैं। इसके अलावा, ऐसे संबंधों की चूक या अनुपलब्धता की स्थिति में, वक्फ बोर्ड द्वारा अधिनियम की खंड 4 की उप-खंड (2) के प्रावधानों के अनुसार रखरखाव का भुगतान किया जाना है। इसका उद्देश्य भुगतान के लिए वैकल्पिक स्रोत प्रदान करके रखरखाव की उचित और उचित राशि का भुगतान सुनिश्चित करना है।इस प्रकार, इन प्रावधानों की व्याख्या इस तरह से नहीं की जा सकती है जो एक दूसरे के लिए विनाशकारी हो।

(55) यह कानून की व्याख्या के किसी भी विवेकपूर्ण सिद्धांतों पर आधारित नहीं होगा, यदि अधिनियम की खंड 3 (1) में 'भीतर' शब्द को 'के लिए' शब्द से प्रतिस्थापित करके, महिलाओं को तलाक की तारीख के बाद केवल तीन मासिक धर्म की अवधि के लिए भरण-पोषण प्रदान किया जाता है और उसे जीवन भर या फिर से शादी करने तक भूख से रहने के लिए छोड़ दिया जाता है।व्यक्तिगत कानून, भले ही वह वही हो जो दूसरे पक्ष से तर्क दिया जाता है, उसे कानूनी प्रावधानों को स्वीकार करना चाहिए और रास्ता देना चाहिए, जिन्हें फिर से संवैधानिक कानून और उसके तहत प्रदान किए गए संरक्षणों के अनुरूप पढ़ा जाना चाहिए।

(57) 'मेहर 'या' डोवर 'एक महत्वपूर्ण शब्द है जिसका उल्लेख इसमें मिलता है।अधिनियम की खंड 3 के प्रावधान। मेहर या डावर धन या अन्य संपत्ति या मूल्यवान वस्तुओं की राशि है जो पत्नी शादी के विचार में पति से प्राप्त करने की हकदार है।कुछ लेखकों ने यह विचार व्यक्त किया है कि मेहर या डावर एक सरल विचार नहीं है जैसा कि अनुबंध के कानून में समझा जाता है।वस्तुतः दहेज एक पति का दायित्व है जो एक अनुबंध से उत्पन्न होता है, या अन्यथा कानून या प्रथा द्वारा पति पर उसकी पत्नी के लिए रसीद के प्रतीक के रूप *में*

लगाया जाता *है।अब्दुल* कादिर बनाम *सलीमा और* सैयद *साबिर हुसैन* बनाम फरजंद हुसैन ।

(58) तैयबजी के मुस्लिम कानून में उपरोक्त निर्णय से दर्ज टिप्पणियों का उल्लेख करना प्रासंगिक हो सकता है जो निम्नानुसार हैः—

> "महर पुरुष द्वारा महिला को अनुबंध में प्रवेश करने के लिए दिया गया आदान-प्रदान या विचार नहीं है; बल्कि अनुबंध का एक प्रभाव है, बल्कि इसका एक प्रभाव है।अपने विषय स्त्री के प्रति सम्मान के प्रतीक के रूप में पति पर कानून द्वारा लगाया गया अनुबंध।"

भरण-पोषण का महत्व जो एक पत्नी का अधिकार है, उसी लेखक द्वारा निम्नलिखित तरीके से वर्णित किया गया हैः—

> "पत्नी अपने पति द्वारा भरण-पोषण की हकदार है क्योंकि उसके पास खुद को बनाए रखने के साधन हो सकते हैं, और हालाँकि उसका पति बिना किसी साधन के हो सकता है।एक पत्नी अपने पति के साथ रहने से इनकार कर सकती है और फिर भी भरण-पोषण का दावा कर सकती है यदि ऐसा करने के लिए उचित आधार हैःउदाहरण के लिए पति ने किसी अन्य व्यक्ति के साथ विवाह किया है या उसकी मालकिन रहती है।"

भरण-पोषण के ऐसे अधिकार को पति के खिलाफ एक विभाग के रूप में भी वर्णित किया गया है जिसे भरण-पोषण प्राप्त करने के लिए सभी अन्य व्यक्तियों के अधिकार पर प्राथमिकता दी गई है।

(59) किसी भी स्थिति में जो सामने आता है वह यह है कि मेहर या डावर विवाह की एक आवश्यक घटना है और इसका भुगतान पति का एक वैधानिक और नैतिक दायित्व है।इस प्रकार सहमत राशि को आपसी समझौते पर या कानून के संचालन द्वारा स्थापित किया जा सकता है।यह राशि पति द्वारा पत्नी के साथ विवाह पर या उसके बाद किसी भी समय देय हो जाती है।अधिनियम के प्रावधान इंगित नहीं करते हैं

तात्कालिक या विलंबित मेहर की योजना।यह भी कानून का स्थापित सिद्धांत है कि मेहर कभी भी अत्यधिक होने के कारण अमान्य नहीं है, जब तक कि कानून के तहत विशेष रूप से प्रदान नहीं किया जाता है।दूसरे शब्दों में, मेहर का भुगतान अपनी पत्नी के प्रति पति का एक वैधानिक और नैतिक दायित्व है।यदि विवाह की निरंतरता के दौरान किसी भी समय पत्नी द्वारा क्यू. आर. की मांग की जाती है, तो इसे विवाह पर तुरंत भुगतान किया जाना चाहिए, या यहां तक कि इसके बाद के किसी भी समय के लिए स्थगित किया जा सकता है।इन सिद्धांतों की अंतर्निहित विशेषता यह है कि मेहर का भुगतान पति का कर्तव्य और पत्नी का विशेषाधिकार है।

(60) दवार को एक ऋण के रूप में माना जाता है और इसका भुगतान पति की मृत्यु पर भी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से किया जाता है और यदि पत्नी अपने पति की संपत्ति के कब्जे में है, तो उसे दवार के दावे के समायोजन के लिए ऐसी संपत्ति का उपयोग करने का अधिकार है।

(61) मुस्लिम महिलाओं को उनके व्यक्तिगत कानून के तहत और देय राशि के संदर्भ

में उपलब्ध सुरक्षा होने के कारण, मेहर पति का एक दायित्व है जो किसी अन्य भुगतान या परिणाम के परिणामस्वरूप मुक्त नहीं होता है।रखरखाव की राशि और देय अन्य राशियों और उस प्रावधान के अनुरूप वितरित की जाने वाली संपत्तियों के अलावा खंड 3 के तहत मेहर को एक घटक के रूप में जोड़ने का विधानमंडल का इरादा उस अधिनियम के तहत तलाकशुदा महिलाओं को निश्चित और अतिरिक्त वित्तीय और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना है। पूर्व में बताए गए विचारों को तैयार करने में हम तैयबजी के मुस्लिम कानून के चौथे संस्करण और मुल्ला द्वारा मुस्लिम कानून के सिद्धांतों पर भरोसा करते हैं।

(62) जहां विधानमंडल ऐसी सीमा को सीमित करने या दरकिनार करने और सुधार करने के लिए अधिनियम में उपयोग की जाने वाली विशिष्ट भाषा द्वारा संरक्षण के अतिरिक्त लाभ प्रदान करने का इरादा रखता है, ऐसे इरादे पर निहितार्थ न तो अनुमेय होगा और न ही उचित।इस तरह के भुगतान का उद्देश्य तलाकशुदा की निर्धनता को दूर करना और उसे अपना भरण-पोषण करने के लिए सामान प्रदान करना है।खंड 3 के प्रावधानों के अनुप्रयोग को सीमित करने के लिए एक तर्कसंगत होना चाहिए और होना *चाहिए, जो* हमें *कोई नहीं लगता* है।बाई ताहिरा बनाम अली हुसैन फिज़ाली के मामले में अदालत ने कहा कि प्रथागत या व्यक्तिगत कानून के माध्यम से भ्रामक राशियों का भुगतान रखरखाव की राशि के निर्धारण के लिए एक विचार हो सकता है, लेकिन इस तरह के प्रावधान का कोई भी निर्माण वैधानिक अधिकार की हताशा का कारण नहीं बनता है, क्योंकि कोई भी निर्माण जो वैधानिक परियोजना की हताशा का कारण बनता है, वैधता को सुरक्षित नहीं कर सकता है, अगर अदालत को संविधान को सही सम्मान देना है।

(63) इस प्रकार, मेहर का भुगतान-विवाह के लिए विचार के रूप में-पति द्वारा किए जाने और भुगतान किए जाने वाले उचित और निष्पक्ष प्रावधान और भरण-पोषण की अवधारणा के आधार पर तलाक के लिए विचार नहीं हो सकता है।यह इन प्रावधानों के अनुपालन के लिए आवश्यकता और शीघ्रता की आवश्यकता पर जोर देने के लिए कानून की ओर से सोचा-समझा प्रयास है।इसलिए इसे एक निर्दिष्ट अवधि तक दावे को सीमित करने के लिए नहीं समझा जा सकता है।

इसलिए, 'इद्दत अवधि के भीतर' अभिव्यक्ति केवल उस अवधि को परिभाषित और योग्य बनाती है जिसके भीतर पति द्वारा विभिन्न देनदारियों का निर्वहन किया जाना है और इसका मतलब यह नहीं है कि उसका दायित्व केवल उस अवधि तक सीमित है।क्या यह विधानमंडल का इरादा हो सकता है कि वे एक ओर मेहर के भुगतान, रखरखाव, संपत्तियों के समर्पण और अपने बच्चों के रखरखाव के लिए पर्चे के माध्यम से पूर्ण सुरक्षा प्रदान करने का इरादा रखते हैं, इस तथ्य के बावजूद कि उन्हें अपने विवाहित जीवन के दौरान मेहर मिली होगी, वे इस लाभ को सीमित अवधि के लिए देने का इरादा रखते हैं और उसके बाद अपने पूरे जीवन के दौरान या जब तक वह पुनर्विवाह नहीं कर लेती, तब तक वह अपने बच्चों का पालन-पोषण करने और उन्हें दोनों उद्देश्यों को पूरा करने के लिए खुद पर छोड़ देती है।यह अधिनियम के उद्देश्य को पूरी तरह से विफल कर देगा और वास्तव में विधायी इरादे की एक विकृत धारणा होगी।

विधान एक सामाजिक-लाभकारी विधान है और इसकी व्याख्या लाभकारी विधानों के क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों पर आधारित होनी चाहिए।एक व्यापक सामाजिक भलाई पर आधारित एक लाभकारी अधिनियम की व्याख्या उन *लोगों के पक्ष में* की जानी चाहिए जो

अधिनियम से लाभान्वित होने की इच्छा रखते हैं, न कि इसके प्रावधानों की व्याख्या इस तरह से की जानी चाहिए जो अधिनियम की भावना के विपरीत हो।इस तरह का तर्क वास्तव में आत्म-पराजय होगा और कानूनी सिद्धांतों की खोज में एक मार्गदर्शक होने के लिए अस्वीकार्य मानदंड होगा।

(64) एक अन्य अंतर जो इन प्रावधानों को नंगे पढ़ने पर स्पष्ट है, वह यह है कि अधिनियम की खंड 4 के तहत एक आदेश पारित करते समय मजिस्ट्रेट को इस सिद्धांत द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए कि एक तलाकशुदा मुस्लिम महिला जिसने फिर से शादी नहीं की है और इद्दत अवधि के बाद खुद को बनाए रखने में समर्थ नहीं है, वह खंड 4 में निर्दिष्ट संबंधों से अपने उचित और उचित भरण-पोषण के भुगतान के लिए आदेश प्राप्त कर सकती है।खंड 3 के तहत एक आवेदन पर विचार करते समय मजिस्ट्रेट को इस सिद्धांत से निर्देशित नहीं होना चाहिए कि वह खुद को बनाए रखने में समर्थ नहीं है।इस प्रकार, खंड 3 का दायरा बहुत व्यापक है और यह पत्नी को एक वंशानुगत जीवन और जीवन स्तर प्रदान करने की आवश्यकता पर जोर देता है जिसका वह आनंद लेती।

अपने पति के साथ अपने वैवाहिक घर में रहते हुए।यह इन प्रावधानों का सामंजस्यपूर्ण निर्माण नहीं होगा यदि पत्नी को इद्दत की सीमित अवधि के लिए वंशानुगत जीवन स्तर का हकदार माना जाता है और अगर वह खुद को बनाए रखने में असमर्थ है तो तीन के बाद एक गरीब व्यक्ति की तरह रहने के लिए मजबूर किया जाता है।

(65) उपरोक्त चर्चा से जो एकमात्र निष्कर्ष निकाला जा सकता है वह यह है कि इद्दत अवधि के भीतर पति द्वारा पत्नी को किया जाने वाला उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण ऐसा होना चाहिए जो उसे सुरक्षा और ऐसे मानक प्रदान करे। जैसा कि अधिनियम की धारा 3 के तहत बताया गया है, वह अपना जीवन गुजारेगी और ऐसा न करने पर इस तरह के भरण-पोषण का भुगतान करने में पति की जिम्मेदारी बनी रहेगी। भरण-पोषण की राशि के निर्धारण और भुगतान में निष्पक्षता अधिनियम की धारा 3 के प्रावधानों का आधार प्रतीत होती है। उचित गुजारा भत्ता तय करने में निष्पक्षता भी न्यायालयों के लिए मार्गदर्शक कारक है जो अधिनियम की धारा 3 में बताए गए अपेक्षित मापदंडों के अनुसार पत्नी के जीवित रहने या पुनर्विवाह होने तक उचित और उचित जीवन सुनिश्चित करेगी।,

(66) हमारे समक्ष निर्दिष्ट निर्णयों पर आते हुए, सबसे पहले हम अरब अहमदिया अब्दुल्ला (उपरोक्त) के *मामले का उल्लेख* करेंगे, जहाँ गुजरात उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया थाः—

> "यह नहीं कहा जा सकता है कि अधिनियम की धारा 3 (एल) (ए) में उपयोग किए गए "भीतर" शब्द को "के लिए" या "दौरान" के रूप में पढ़ा जाना चाहिए।इन शब्दों को उनके अर्थ के विपरीत नहीं माना जा सकता है क्योंकि "भीतर" शब्द का अर्थ होगा "आगे या उससे पहले", "आगे नहीं", "बाद में नहीं"।अधिनियम के तहत संसद द्वारा उपयोग किए जाने वाले "भीतर" शब्द का अर्थ होगा कि इद्दत अवधि की समाप्ति पर या उससे पहले, पति पत्नी को उचित और निष्पक्ष प्रावधान और भरण-पोषण करने और भुगतान करने के लिए बाध्य है।यदि वह ऐसा करने में विफल रहता है, तो पत्नी खंड 3 की उप-खंड (2) में दिए गए प्रावधान के अनुसार मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन दायर करके इसे वसूल करने का हकदार है, लेकिन

जहां संसद ने यह प्रावधान किया है कि उचित और निष्पक्ष प्रावधान और भरण-पोषण केवल इद्दत अवधि के लिए सीमित है या जिसका भुगतान केवल इद्दत अवधि के दौरान किया जाना है, न कि उससे आगे।"

"यदि अधिनियम की खंड 3 (एल) (ए), 3 (एल) (बी), 3 (3) और खंड 4 के साथ-साथ खंड 5 में उपयोग किए गए विभिन्न वाक्यांशों को एक साथ पढ़ा जाता है, तो यह स्पष्ट होगा कि संसद यह प्रावधान करना चाहती है कि तलाकशुदा महिला पूरी तरह से संरक्षित है यदि वह पुनर्विवाह नहीं करती है और उसे पर्याप्त प्रावधान मिलता है और

आवश्यकता पड़ने पर उसके पूर्व पति से भरण-पोषण और/या उसके रिश्तेदारों या वक्फ बोर्ड से भरण-पोषण।"

एम. सुभान बनाम श्रीमती के मामले में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने भी इसी *तरह का* विचार *रखा था। मकबूल बी और* एक अन्य (37), जिसमें न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक मुस्लिम महिला अधिनियम के लागू होने से पहले उसे दिए गए भरण-पोषण भत्ते में वृद्धि के लिए आवेदन कर सकती है और ऐसा आवेदन (संहिता की खंड 127 के तहत) किसी भी सिद्धांत पर वर्जित नहीं था।फिर भी अली *बनाम* सूफैरा *(38)* के मामले में, केरल उच्च न्यायालय ने इसी तरह का दृष्टिकोण अपनाया और इस विषय पर विस्तृत चर्चा के बाद, निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः—

"इससे यह स्पष्ट है कि जिस मुस्लिम पति ने महिला को तलाक दिया है, उसे महिला के प्रति बहुत उदार होना चाहिए और उसे उसके भविष्य के लिए काफी कुछ देना *चाहिए, आयत 241 में कहा गया हैः— "तलाकशुदा महिला के लिए*
रखरखाव (प्रदान किया जाना चाहिए)
एक उचित (पैमाने पर)
यह कर्तव्य है।
सच्चरित्रों पर।"

आयत 242 प्रदान करता हैः

"इस प्रकार भगवान करते हैं
अपने लिए उसकी निशानियाँ स्पष्ट आदेश दो, ताकि तुम समझ सको।"

इससे यह स्पष्ट है कि जो मुसलमान ईश्वर में विश्वास करता है, उसे तलाकशुदा महिला को उपहार या भरण-पोषण के रूप में उचित राशि देनी चाहिए।वह उपहार या रखरखाव इद्दत की अवधि तक सीमित नहीं है।यह उसकी भविष्य की आजीविका के लिए है क्योंकि-भगवान सब कुछ अच्छा देखना चाहते हैं।यह उपहार पति की क्षमता पर निर्भर करता है।कुरान के आदेश के अनुसार तलाक के समय पति द्वारा दिए जाने वाले उपहार को अधिनियम की धारा-3 के खंड (1) के उपखंड (ए) में मान्यता दी गई है। यह दायित्व पति पर तलाकशुदा महिला के साथ संबंध के कारण प्राप्त पिछले लाभ के कारण या वैवाहिक संगति के कारण उसे हुए पिछले नुकसान के कारण डाला जाता है, जो एक प्रतिपूरक उपहार या तलाक के बाद महिला को उसके जीवन के लिए बनाए रखने के लिए एक मुआवजे के रूप में है।

इस्लामी समानता के सिद्धांत उक्त प्रावधान या पूर्व पति से मुआवजा या समर्थन पत्नी का अधिकार है।उपरोक्त प्रावधान में इस अधिकार को विधायी मान्यता दी गई है।इसलिए, मुझे इस तर्क को प्रतिग्रहण करना करना मुश्किल लगता है कि पूर्व पति का एकमात्र दायित्व केवल इद्दत की अवधि के दौरान तलाकशुदा मुस्लिम महिला को भरण-पोषण का भुगतान करना है।

ऊपर व्यक्त किए गए विचारों के विपरीत, अब्दुल रशीद बनाम सुल्ताना बेगम (39) के मामले *में कलकत्ता* उच्च *न्यायालय और अब्दुल* हामिद बनाम एम. एस. टी. के मामले में राजस्थान *उच्च न्यायालय।* एशिया *का* मानना है कि अधिनियम के प्रावधानों के तहत देय रखरखाव केवल इद्दत की अवधि तक ही सीमित है।

• (67) पति याचिकाकर्ता की ओर से पेश विद्वान अधिवक्ता ने मुख्य रूप से ऑल इंडिया मुस्लिम एडवोकेट्स फोरम बनाम उस्मान खान ब्राह्मणी उपनाम बाशा और अन्य के मामले *में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय* की *पूर्ण पीठ द्वारा* व्यक्त *किए गए बहुमत* के विचार पर भरोसा किया है, पूर्ण पीठ ने यह विचार लिया है कि मुस्लिम तलाकशुदा महिलाएं अधिनियम के प्रारंभ के बाद संहिता की खंड 125 के तहत भरण-पोषण का दावा नहीं कर सकती हैं। इसने यह भी विचार लिया है कि रखरखाव केवल इद्दत अवधि के लिए देय है और आगे नहीं।

(68) प्रारंभ में, पीठ का अवलोकन उपरोक्त निर्णय में सर्वसम्मत नहीं था।हम उक्त निर्णय में अल्पमत के दृष्टिकोण द्वारा दिए गए तर्क से सहमत होने और उसे अपनाने के लिए अधिक इच्छुक हैं।एक अन्य विशेषता यह है कि निर्णय के पैराग्राफ 38 में बहुमत के दृष्टिकोण ने शाह बानो के मामले (ऊपर) में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर टिप्पणी की है और उसकी *आलोचना* करने का प्रयास किया है।आलोचना मूल रूप से इस आधार पर की गई है कि सर्वोच्च न्यायालय ने गलत तरीके से कुरान के दुभाषिये की भूमिका ग्रहण की, जो पूर्वानुमेय नहीं है, हालाँकि, माननीय न्यायाधीशों ने उसी भूमिका को निभाने का प्रयास किया है।चाहे जो भी हो, सम्मानपूर्वक लेकिन खेदजनक रूप से, बहुमत के दृष्टिकोण से भिन्न होते हुए भी हम महसूस करते हैं कि न्यायिक अनुशासन और औचित्य इस संबंध में बहुमत के दृष्टिकोण द्वारा व्यक्त किए गए निर्णय की अनुमति नहीं देते हैं, हम केवल इस संबंध में *श्री अबनी कांत राज* बनाम *उड़ीसा राज्य* के मामले में उच्चतम न्यायालय के हाल के फैसले का संदर्भ देंगे।कुछ सिद्धांतों पर सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय इस क्षेत्र को नियंत्रित करना जारी रखेगा, क्योंकि भूमि को किसी भी मामले में निर्णय से पता *चलता* है कि पक्षकार आज भी एक अच्छे कानून के रूप में खड़े होंगे।

(69) इस निर्णय में हमारे द्वारा दिए गए कारणों के अलावा हम आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के फैसले के अल्पमत दृष्टिकोण को बनाने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए तर्क से सहमत होना पसंद करेंगे।इन्हीं कारणों से हम बहुमत के दृष्टिकोण के साथ सहमति बनाने के लिए खुद को राजी नहीं कर पा रहे समर्थ।सर्वोच्च न्यायालय के फैसले ने तलाकशुदा पत्नी को भरण-पोषण का भुगतान करने के लिए मुस्लिम पति के दायित्व के बारे में कुछ विवाद पैदा कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप यह अधिनियम लागू हुआ और इसका मतलब यह नहीं होगा कि विधानमंडल निर्णय को अमान्य करने का इरादा रखता है।हम अधिनियम के उद्देश्य और कारणों में इस तरह के तर्क को देखने में असमर्थ हैं। विवाद तभी उत्पन्न होता है जब किसी विषय के बारे में दो विचार होते हैं।इस अधिनियम के प्रावधानों से यह संकेत नहीं मिलता है कि विधानमंडल का इरादा यह था कि एक तलाकशुदा मुस्लिम पत्नी अपनी दिन-प्रतिदिन की जरूरतों के लिए

किसी की दया पर नहीं है और पति भरण-पोषण का भुगतान करने के लिए बाध्य नहीं है।

(70) विधेयक के साथ संलग्न उद्देश्यों और कारणों के विवरण को अधिनियम के निर्माण में सहायता के रूप में नहीं माना जाना चाहिए।किसी अधिनियम या विधेयक के उद्देश्य और कारण केवल इस हद तक चाहते हैं कि प्रस्तावक को सदन में विधेयक पेश करने के लिए कौन से कारण प्रेरित करते हैं और वह किस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए प्रयास करता है।यह आवश्यक नहीं है कि वे हमेशा उस उद्देश्य के अनुरूप हों जो विधेयक को कानून में पारित करते समय सदन के बहुमत के विचार में था।यह भी आवश्यक नहीं है कि उद्देश्य और कारण अधिनियम के विशिष्ट या सामान्य प्रावधानों को समझने में मदद करेंगे। श्री न्यायाधीश एस. के. दास ने निम्नलिखित अभिव्यक्ति में इन सिद्धांतों को दोहराया, "उद्देश्य और कारणों का कथन स्वीकार्य नहीं है।हालाँकि, खंड को समझने के लिए यह उपयोग किए गए वास्तविक शब्दों को नियंत्रित कर सकता है " का संदर्भ लें)।

(71) वर्तमान अधिनियम इन शब्दों के साथ शुरू होता है, "उन मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए जो तलाकशुदा हैं या जो तलाक चाहती हैं और उनसे जुड़े या प्रासंगिक मामलों का प्रावधान करने के लिए।इसलिए, विधानमंडल ने अधिनियम के लिए कारण देते हुए, व्यापक परिमाण और वर्णक्रम के शब्दों का उपयोग करके जानबूझकर अपनी इच्छा व्यक्त की है।इस प्रकार, इन प्रावधानों को संकीर्ण या सीमित अर्थ देना काफी उचित नहीं हो सकता है।

(72) उच्च न्यायालयों द्वारा ऊपर निर्दिष्ट निर्णयों में जिस अन्य आधार पर विचार किया गया है, वह यह है कि संहिता के प्रावधानों और इस अधिनियम के प्रावधानों के बीच स्पष्ट रूप से टकराव है। अधिनियम के प्रावधान एक विशेष कानून होने के कारण संहिता, सामान्य कानून के प्रावधानों पर प्राथमिकता लेनी चाहिए।हम इन दोनों कानूनों के बीच ऐसी कोई विसंगति या विरोधाभास नहीं देखते हैं।दोनों को एक दिए गए वर्ग के रखरखाव के अधिकार की रक्षा के लिए एक समान इरादे के साथ कानून बनाया गया है।जबकि अधिनियम उन प्रकार के दावों पर अधिक जोर देता है जिनके लिए एक तलाकशुदा मुस्लिम महिला हकदार है, जिसमें भरण-पोषण का अधिकार, संहिता के प्रावधान और व्यक्तियों के एक बड़े वर्ग पर लागू होते हैं, लेकिन केवल भरण-पोषण का दावा करने का अधिकार देता है।वे एक सामान्य उद्देश्य को प्राप्त करने का इरादा रखते हैं अर्थात दी गई परिस्थितियों में पत्नी या तलाकशुदा पत्नी को देय न्यूनतम सम्मान और गरिमा और भरण-पोषण की राशि।ये वे प्रावधान हैं जो एक दूसरे के समानांतर चलते हैं।उदाहरण के लिए, एक मुस्लिम विवाहित महिला, जिसका तलाक नहीं हुआ है या जिसने तलाक नहीं लिया है, फिर भी संहिता की खंड 125 के प्रावधानों को लागू करने में समर्थ होगी, जबकि एक तलाकशुदा महिला भी इन प्रावधानों को लागू कर सकती है और संहिता की खंड 125 से 128 के प्रावधानों द्वारा शासित होने का विकल्प चुन सकती है, लेकिन केवल उस स्थिति में जब पक्ष अधिनियम की धारा 5 की आवश्यकताओं का पालन करते हैं। इन कानूनों का आसानी से पुनर्मूल्यांकन किया जा सकता है।इन प्रावधानों के बीच कोई "आमने-सामने का टकराव" नहीं है।किसी भी प्रावधान की घृणा या हताशा से बचने के लिए उन्हें सामंजस्यपूर्ण रूप से समझा जाना चाहिए और किया जाना चाहिए।

(73) यह सिद्धांत कि किसी मामले पर एक विशेष प्रावधान उस मामले पर एक सामान्य प्रावधान के अनुप्रयोग को बाहर करता है, जब दो प्रावधान बहुवचन उपचारों की वैधता के लिए

उपचार से संबंधित हैं, तो लागू नहीं किया जा सकता *है (संदर्भ बिहार राज्य सहकारी विपणन* संघ *लिमिटेड, बनाम उमा* शंकर सरन ।संहिता और अधिनियम के प्रावधान एक समान इच्छित उपचार के साथ विभिन्न क्षेत्रों में काम करते हैं, लेकिन कुछ क्षेत्रों में दोनों कानूनों का अनुप्रयोग है जैसा कि अधिनियम के प्रावधानों की भाषा से स्पष्ट है।

(74) तलाकशुदा पत्नी द्वारा अधिनियम की खंड 3 (2) के तहत मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन दायर करना चूक पर आधारित है।बकाया राशि का भुगतान न करना और खंड 3 की उप-खंड (1) में निर्दिष्ट संपत्तियों का वितरण करना चूक है।वह अवधि जो चूक को जन्म देती है "उसके पति द्वारा इद्दत अवधि के भीतर उसे भुगतान किया जाता है।"इस प्रकार कारण डिफ़ॉल्ट की स्थिति में उत्पन्न होता है।एक कौ एंड ई का कारण होने वाली चीज़ का कारण है।तलाक के कारण होने वाली बात यह है कि पत्नी को किन शर्तों का सामना करना पड़ेगा।जिस आदमी ने उसे तलाक दिया है, उसे पूरा करना होगा।

पत्नी को बनाए रखने का उसका दायित्व।यदि वह इस दायित्व का निर्वहन करने में विफल रहता है, तो यह चूक का कारण बन जाता है जिसने पत्नी को वाद हेतुक बना दिया।

(75) यह भी उतना ही सच है कि एक अधिकार गलत से उत्पन्न नहीं होता है।पत्नी का अधिकार अपने पूर्व पति से भरण-पोषण प्राप्त करना है।इस अधिकार को पराजित नहीं किया जा सकता है, जबकि यह पति का एक वैधानिक, नैतिक और धार्मिक दायित्व है, धाराओं की गलत तरीके से व्याख्या करके।जैसा कि हमने पहले ही चर्चा की है, यह एक सामाजिक और लाभकारी कानून है।इसका उद्देश्य तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने के एक बड़े उद्देश्य को प्राप्त करना *है।व्याख्या के वर्तमान प्रश्न पर माकिस डी बोनो* काम डी मालो लेक्स का सिद्धांत उचित रूप से लागू होगा।कानून को अच्छे के बजाय बुरे के पक्ष में होना चाहिए।दूसरे शब्दों में, कानून द्वारा प्रदान किए जाने वाले संरक्षण को ऐसे लाभ या संरक्षण की अनुमति देने वाले प्रावधानों के संकीर्ण निर्माण पर पराजित नहीं किया जाना चाहिए।उपरोक्त कारण भी हैं जिन्हें निर्णय की शुरुआत में हमारे द्वारा तैयार किए गए प्रश्न संख्या 1 से 4 के उत्तर देने के लिए एक तर्क के रूप में पढ़ा जाना चाहिए।

(76) हमारा विचार है कि भरण-पोषण का भुगतान करने का पति का दायित्व केवल इद्दत की अवधि तक ही सीमित नहीं है, जब तक कि पति इद्दत अवधि के भीतर या उसके बाद उचित भरण-पोषण के लिए भुगतान और प्रावधान नहीं करता है, जो कि अधिनियम के प्रावधानों में निर्दिष्ट अनिवार्य अवयवों को ध्यान में रखते हुए, उसके शेष जीवन के लिए या जब तक वह पुनर्विवाह नहीं करती है या कोई अयोग्यता या अपराध अर्जित नहीं करती है, जो उसे कानून में इस तरह के उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण प्राप्त करने से वंचित कर देगा, तब तक रखरखाव की एक उचित राशि होगी।

प्रश्न सं। 4:

(77) इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हमें एक ओर अधिनियम की आदेश 5 और 7 के प्रावधानों और दूसरी ओर अधिनियम की आदेश 3 और 4 के गैर-अबाधित खंडों को ध्यान में रखना होगा।इस अधिनियम के प्रावधान संहिता के प्रावधानों की तुलना में अधिनियम के प्रावधानों द्वारा शासित सीमित वर्ग के पक्ष में प्राथमिकता से काम करेंगे।संहिता की खंड 125 या 127 के तहत इस अधिनियम के प्रारंभ में लंबित प्रत्येक आवेदन का निपटान अधिनियम के प्रावधानों के

अनुसार किया जाएगा जिसका स्पष्ट रूप से अर्थ है "खंड 5 के प्रावधानों के अधीन"।

हमारे द्वारा निर्दिष्ट अधिकांश निर्णयों में यह विचार लिया गया है कि खंड 125 के प्रावधान इन पर लागू नहीं होंगे -

अधिनियम के प्रारंभ में तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं का यह सीमित वर्ग। हम ऊपर बताए गए हद तक इस दृष्टिकोण से सहमत होंगे।(अखिल भारतीय मुस्लिम अधिवक्ता मंच *के मामले (उपरोक्त) और ए. अब्दुल* गफूर कुंजू बनाम *अवा उम्मल पथुम्मा* बीवी *और एक अन्य (44) का संदर्भ* लें।

(78) जबकि खंड 3 स्पष्ट रूप से बताती है कि किसी तलाकशुदा मुस्लिम महिला को उस खंड 4 में निर्दिष्ट दावों को उठाने का अधिकार है, जिसमें कहा गया है कि इस अधिनियम के पूर्वगामी प्रावधानों और उस समय लागू किसी अन्य कानून में कुछ भी निहित होने के बावजूद, खंड 4 के प्रावधान प्रबल होंगे।यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि अधिनियम की खंड 7 संहिता की खंड 128 के प्रावधानों को विशेष रूप से या आवश्यक निहितार्थ से प्रभावित नहीं करती है।यहां तक कि खंड 4 में गैर-अस्थाई खंड भी खंड 7 पर लागू नहीं होगा क्योंकि यह इसके अनुप्रयोग को केवल अधिनियम के पूर्वगामी प्रावधानों तक ही सीमित करता है।खंड 7 में यह कहने के लिए स्पष्ट भाषा का उपयोग किया गया है कि एक तलाकशुदा महिला द्वारा प्रत्येक आवेदन, इस अधिनियम के प्रारंभ पर, एक मजिस्ट्रेट के समक्ष लंबित, अधिनियम के प्रावधानों के तहत निपटा जाएगा। आवेदक के लिए खंड 3 और 4 के तहत नए आवेदन स्थापित किए जा सकते हैं, हालांकि, पार्टियों को अधिनियम की खंड 5 के तहत अपने विकल्प का प्रयोग करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

(79) इन प्रावधानों के उचित विश्लेषण और असंकलित निर्णयों को ध्यान में रखते हुए हमारा विचार है कि तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के संबंध में संहिता की खंड 125 या 127 के प्रावधान इस अधिनियम के प्रावधानों के लागू होने के बाद लागू नहीं होंगे। इसका अपवाद यह है कि इस अधिनियम के पक्षकार इस अधिनियम की खंड 5 के प्रावधानों के अनुसार अपने विकल्प का प्रयोग करते हैं। हमारे द्वारा दिए गए उपरोक्त निष्कर्षों का कोई परिणाम नहीं है यदि आवेदन अधिनियम के प्रावधानों के तहत एक बच्चे द्वारा या एक मुस्लिम पत्नी द्वारा दायर किया जाता है जो तलाकशुदा नहीं है।इसलिए, हम ऊपर उठाए गए प्रश्नों का उत्तर नहीं देने के लिए आगे बढ़ते हैं, जैसा कि नीचे दिया गया है:—

प्रश्न सं। 1: दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा पारित एक काल्पनिक आदेश और संहिता की धारा 128 के प्रावधानों के अनुसार इसका निष्पादन न तो अमान्य है और न ही मुस्लिम महिलाओं (अधिकारों का संरक्षण) के प्रावधानों द्वारा वर्जित है। तलाक) अधिनियम, 1986. 44. 1989 सीआरएल। लॉ जर्नल 1224

अधिनियम के प्रावधान संहिता की धारा 125 के तहत निर्धारित अधिकारों और लाभों से निहित पार्टी को वंचित नहीं करते हैं।

(1))**प्रश्न सं। 2:**

संहिता की खंड 125 के तहत भरण-पोषण का दावा करने का बच्चे का अधिकार इस अधिनियम के प्रावधानों से किसी भी तरह से प्रतिकूल रूप से प्रभावित नहीं है। हालाँकि,

यह ऐसे बच्चे के जन्म की तारीख से दो साल की प्रारंभिक अवधि के लिए सीमा के अधीन है, वह भी केवल तभी जब पिता ने उस संबंध में मां के दावे पर ऐसे बच्चे को उचित और उचित प्रावधान और रखरखाव प्रदान किया हो।

प्रश्न सं। 3:

(81) तलाकशुदा मुस्लिम पत्नी द्वारा भरण-पोषण का दावा अनिवार्य रूप से केवल इद्दत अवधि तक ही सीमित नहीं होना चाहिए।जब तक पति सक्षम अधिकार क्षेत्र वाले न्यायालय के समक्ष यह नहीं दिखाता है कि उसने इद्दत अवधि के भीतर पत्नी को उसके जीवन के लिए या जब तक वह पुनर्विवाह नहीं करती, उसके लिए एक उचित और उचित प्रावधान और भरण-पोषण प्रदान किया है, जो एक पर्याप्त प्रावधान है।पति न्यायालय के समक्ष यह दिखा सकता है कि पत्नी अपने स्वयं के कार्य और आचरण से कानून के अनुसार ऐसी राशि प्राप्त करने के लिए अयोग्य हो गई है या उसने अयोग्यता अर्जित की है जिससे वह भरण-पोषण की राशि के भुगतान के लिए अयोग्य हो गई है।

प्रश्न सं। 4:

(82) एक तलाकशुदा मुस्लिम महिला इस अधिनियम के प्रारंभ के बाद संहिता की खंड 125 के प्रावधानों का सहारा ले सकती है। हालाँकि, ऐसे प्रावधानों का सहारा लेने की भी अनुमति है यदि दोनों पक्ष अधिनियम की खंड 5 को आगे बढ़ाते हुए ऐसे प्रावधान द्वारा शासित होने के लिए अपने आवश्यक शपथ पत्र प्रस्तुत करते हैं। यह उत्तर स्पष्ट रूप से हमारे द्वारा प्रश्न संख्या 1 को दिए गए उत्तर के अधीन है।

(83) हमारे लिए इन सभी प्रश्नों से निपटना आवश्यक हो गया था क्योंकि याचिकाकर्ता की ओर से उठाए गए तर्क इन बुनियादी और प्रासंगिक प्रश्नों पर आधारित थे।याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि अधिनियम की खंड 3 (1) को देखते हुए, याचिकाकर्ता का इद्दत अवधि के बाद बच्चे और पत्नी को कोई भरण-पोषण देने का कोई दायित्व नहीं है क्योंकि उसने 1987 से अपनी पत्नी को तलाक दे दिया था।उन्होंने आगे तर्क दिया है कि अधिनियम के प्रारंभ पर संहिता की धारा 125 से 128 के प्रावधानों के तहत मजिस्ट्रेट के आदेश अप्रभावी हो गए थे और विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा विस्तार का निर्देश देने वाला कोई भी आदेश पारित किया गया था।

उनकी गिरफ्तारी की अवधि या उन्हें भरण-पोषण अवशिष्ट का भुगतान करने का निर्देश देना कानून में अमान्य था।

(84) प्रतिवादी-पत्नी और बच्चे के विद्वान अधिवक्ता ने ऊपर हमारे द्वारा निर्दिष्ट कुछ निर्णयों के आधार पर इन सभी तर्कों का विरोध किया है।हमारे समक्ष उठाए गए तर्कों के संचयी प्रभाव और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पुनरीक्षण याचिका को ही एक पूर्ण पीठ द्वारा सुनवाई के लिए निर्देशित किया गया था, हमारे लिए प्रश्नों को तैयार करना और कुछ विस्तार के साथ उनका उत्तर देना अनुचित हो गया था।

(85) प्रतिवादी की ओर से आपत्ति स्पष्ट रूप से पहली बार वर्ष 1990 में उठाई गई थी।याचिकाकर्ता एक ऐसा व्यक्ति है जिसने प्रतिवादी को रखरखाव के कारण भुगतान करने के द्वारा आदेशित राशि का भुगतान करने में पूरी तरह से चूक की है।किसी भी अदालत ने किसी

भी समय याचिकाकर्ता के पक्ष में पूर्ण स्थगन नहीं दिया था।20 अगस्त, 1990 के आदेश के माध्यम *से* उच्च न्यायालय ने याचिकाकर्ता को मासिक किश्तों में भुगतान करने की अनुमति दी थी, जिसका याचिकाकर्ता अनुपालन करने में विफल रहा।इसके अलावा खण्ड पीठ 7 फरवरी, 1992 के आदेश की तारीख के अनुसार याचिकाकर्ता-पति को नाबालिग बच्चे को भी भरण-पोषण की अवशिष्ट राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया था।पति ने उस ओर से भी चूक की।1 अक्टूबर, 1992 के न्यायालय के आदेश के अनुसार दी गई अंतरिम रोक स्वतः ही खाली हो गई।यह खण्ड पीठ द्वारा 4 अक्टूबर, 1992 के अपने आदेश में दर्ज किया गया था।

(86) वर्तमान मामले में पति द्वारा यह स्वीकार किया जाता है कि इद्दत अवधि के दौरान या उसके बाद भी न तो उसने कोई प्रावधान किया है और न ही भरण-पोषण के लिए ऐसी राशि का भुगतान किया है, जिसे पत्नी के लिए अपने और अपने बच्चे का जीवन भर रखरखाव करने के लिए एक उचित और उचित राशि कहा जा सकता है।मान लीजिए कि उन्होंने अभी तक दूसरी शादी नहीं की है।

(87) हम पहले ही यह मान चुके हैं कि 28 फरवरी, 1985 का विद्वत मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश अमान्य नहीं है और न ही अप्रभावी है।आदेश कानून के अनुसार निष्पादित किया जा सकता है।याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता की याचिका कि उसका दायित्व इद्दत अवधि की समाप्ति पर तुरंत समाप्त हो जाता है, चाहे कोई अन्य परिणाम कुछ भी हो, ऊपर दर्ज किए गए कारणों के लिए समान रूप से असमर्थनीय है।किसी भी मामले में अपने नाबालिग बच्चों का पालन-पोषण करने का पिता का दायित्व अंततः ओ. आई. एन. यू. आर. सबा खातून *(उपरोक्त) मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले से तय हो जाता है।*

(88) यह एक स्वीकृत सिद्धांत है कि आई. एस. एल. ओ. 1 परिवर्तनशील है।यह वैधानिक प्रावधानों के अनुरूप और समाज की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए समय के साथ आगे बढ़ता है।प्रावधानों की व्याख्या, विशेष रूप से सामाजिक और लाभकारी प्रावधानों के संबंध में भी समानता, एकरूपता और अस्पष्ट अंतर से बचना बुनियादी कारक हैं।न्यायालयों द्वारा दी गई व्याख्या वैधानिक प्रावधानों और विधायी इरादे के अनुरूप होनी चाहिए, लेकिन साथ ही, ऐसा दृष्टिकोण प्रतीत नहीं होना चाहिए जो इसके सामने एक आदर्शवादी दृष्टिकोण हो।

(89) कानून के विकास के लिए रचनात्मक और सामंजस्यपूर्ण दृष्टिकोण जो व्यक्तिगत या प्रथागत कानून को अपने आवरण में लेता है, उसे कठिन और आवश्यकता उन्मुख स्थितियों के लिए आशुरचना की ओर ले जाना चाहिए।

(90) ऊपर बताए गए कारणों से हम 21 दिसंबर, 1991 के आदेश के खिलाफ पति द्वारा दायर पुनरीक्षण याचिका को खारिज करते हैं।हम याचिकाकर्ता को अपनी तलाकशुदा पत्नी और बच्चे के भरण-पोषण अवशिष्ट का भुगतान आज से तीन मिलियन पाउंड की अवधि के भीतर करने का निर्देश देते हैं।मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, प्रतिवादी उन लागतों के हकदार होंगे, जिनका आकलन रु 2, 500/-है

आरएनआर

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

आकांक्षा सैनी

प्रशिक्षु न्यायिक पदाधिकारी

सोनीपत(हरियाणा)